चन्दामामा
मई १९८८

टामी-द टकर

"बनता है ये खेल खेल में, हँसी खुशी में, रेल पेल में
सोच समझ कर झट चिपकाओ, मौज-मौज में इसे बनाओ"

—फ़ेवी फ़ेयरी
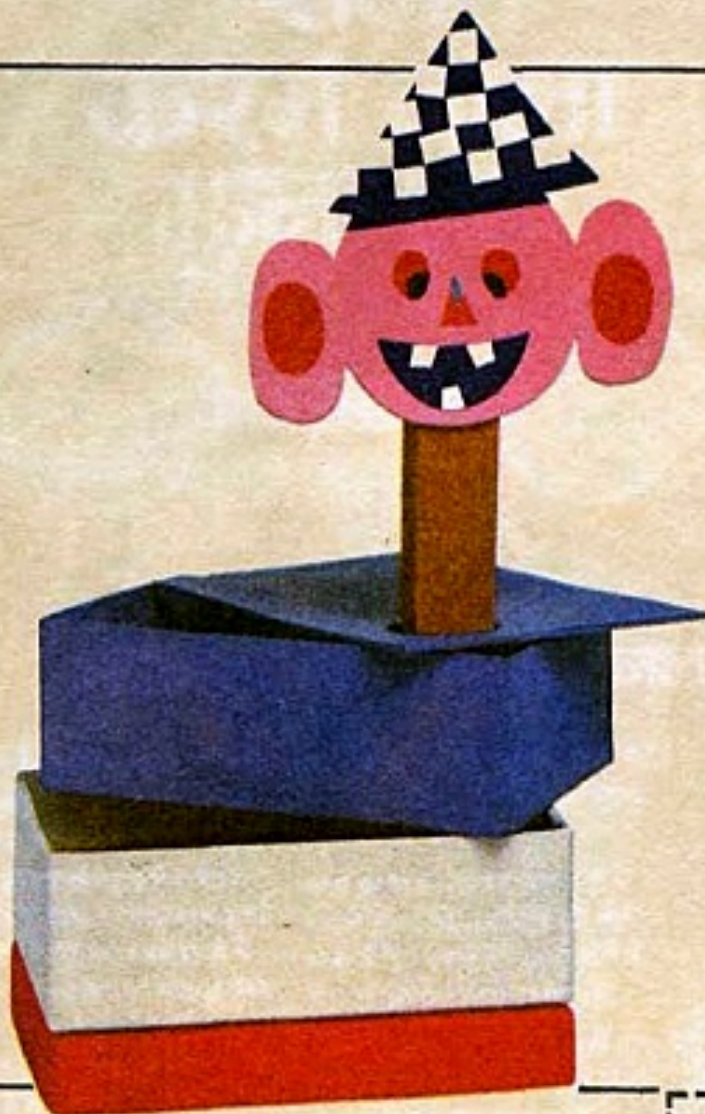
"जादू का करिश्मा नहीं
हाथ का कमाल है
पैसे का सवाल नहीं
काम बेमिसाल है।"
"जल्दी आकर हमें बताओ
करना क्या है—यह समझाओ।"
"जल्दी आओ
सब कुछ सुन लो...
सोचो समझो झट चिपकाओ
फेविकोल एम आर को लाओ
मोर बनाओ,
गुड़िया, टोकरी, पर्स बनाओ
न चिप-चिप है, न है गंदगी
मज़े-मज़े में करते जाओ
करते जाओ।।"

इस टामी—द टकर को बनाने की क्रमवार रीति
मुफ्त प्राप्त करने के लिए यह कूपन भेजिए।
इस पते पर लिखिए 'फेवी फेयरी'
पोस्ट बाक्स ११०८४, बम्बई ४०० ०२०.

इस टामी—द टकर को बनाने की क्रमवार रीति
मुफ्त प्राप्त करने के लिए यह कूपन 'फेवी फेयरी'
पोस्ट बाक्स ११०८४, बम्बई ४०० ०२०.
के पते पर पोस्ट कर दो.

नाम ____________________
उम्र ____________________
पता ____________________
____
नगर ____________________
राज्य __________ पिन __________

फ़ेविकोल एम आर
सिन्थेटिक एड्हेसिव

उत्तम काम, उत्तम नाम, फ़ेविकोल का यह परिणाम

® ये "[logo]" और फ़ेविकोल ब्राण्ड दोनों पिडिलाइट इण्डस्ट्रीज़ प्रा.लि., बम्बई ४०० ०२१ के रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क हैं.

क्या आपको हमारा जर्नल फेविक्राफ्ट मिल गया? हां ☐ नहीं ☐

OBM/2732/HN

नन्हें मुन्नों की पहली पसंद
नये डायमंड कॉमिक्स
मनोरंजन और हंसी का खजाना
48 पृष्ठों में मनोरंजन ही मनोरंजन
कार्टूनिस्ट प्राण का पिंकी और जोकर 5/-
प्राण पिंकी और जोकर
मूल्य प्रत्येक 5/-
डायमंड कामिक्स डाइजेस्ट में
128 पृष्ठों में मनोरंजन का खजाना
चाचा चौधरी
बिल्लू
महाबली शाका
चाचा भतीजा
मूल्य प्रत्येक 12/-
डायमंड कामिक्स प्रा.लि.
2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
अंकुर बाल बुक क्लब
सदस्य बनने के लिए आपको क्या करना होगा :–
1. सदस्यता शुल्क पांच रुपये मनीआर्डर या डाक टिकट द्वारा कूपन के साथ भेजें। सदस्यता शुल्क प्राप्त होने पर ही सदस्य बनाया जायेगा।
2. हर माह पांच पुस्तकें एक साथ मंगवाने पर 2/- की विशेष छूट व डाक व्यय फ्री की सुविधा दी जायेगी। हर माह हम पांच पुस्तकें निर्धारित करेंगे यदि आपको वह पुस्तकें पसन्द हों तो डायमंड कॉमिक्स व डायमंड पाकेट बुक्स की सूची में से कोई पांच पुस्तकें आप पसन्द करके मंगवा सकते हैं लेकिन कम से कम पांच पुस्तकें मंगवाना जरूरी है।
3. आपको हर माह Choice कार्ड भेजा जाएगा यदि आपको निर्धारित पुस्तकें पसन्द हैं तो वह कार्ड भरकर हमें न भेजें। यदि निर्धारित पुस्तकें पसन्द नहीं हैं तो अपनी पसन्द की कम से कम 7 पुस्तकों के नाम भेजें ताकि कोई पुस्तक उपलब्ध न होने की स्थिति में उनमें से 5 पुस्तकें आपको भेजी जा सकें।
4. इस योजना के अन्तर्गत हर माह की 20 तारीख को आपको वी.पी. भेजी जायेगी।
सदस्यता कूपन
मुझे अंकुर बाल बुक क्लब का सदस्य बना लें। सदस्यता शुल्क पांच रुपये मनी आर्डर/डाक टिकट के साथ भेजा जा रहा है। (सदस्यता शुल्क प्राप्त न होने की स्थिति में आपको सदस्यता नहीं दी जायेगी) मैंने नियमों को अच्छी तरह पढ़ लिया है। मैं हर माह वी.पी. छुड़ाने का संकल्प करता/करती हूँ।
नाम
पिता का नाम ....
पता ....
डाकखाना ....
Medialmind

मुफ़्त! एक अनोखा रोल करने वाला झुनझुना

जल्दी कीजिए! स्टाक सीमित है.

सैरेलॅक के हर प्रमोशनल डिब्बे के साथ

इस सुंदर, रंग-बिरंगे, झुनझुने को ज़मीन पर रखकर हल्का सा सरकाते ही वह रोल करने लगता है. इसे अपने मुन्ने के हाथ में दीजिए और देखिए मुन्ने को कितना मज़ा आता है उसके साथ खेलने में. सेरेलॅक के हर प्रमोशनल डिब्बे के साथ आपको यह अनोखा झुनझुना मुफ़्त मिलेगा.

४ महीने की उम्र से आपके शिशु को दूध के साथ-साथ ठोस आहार की भी ज़रूरत होती है. यही समय है उसे सेरेलॅक का अनूठा लाभ देने का.

पौष्टिकता का लाभ : सेरेलॅक का प्रत्येक आहार आपके शिशु को सारे पौष्टिक तत्व प्रदान करता है – प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फ़ैट, विटामिन तथा मिनरल. सेरेलॅक में शिशु की विशेष आवश्यकताओं के अनुसार सब कुछ संतुलित और सही रूप में है – यानि संपूर्ण पोषाहार!

स्वाद का लाभ : सेरेलॅक पौष्टिक होने के साथ-साथ स्वादिष्ट भी है. इसका निराला स्वाद शिशुओं को बहुत भाता है.

समय का लाभ : सेरेलॅक पहले से ही पकाया हुआ है और इसमें दूध और चीनी मौजूद है. इसे उबाले हुए गुनगुने पानी में मिलाइए और बस शिशु को खिलाइए.

पसंद का लाभ : आहार में शिशु को और आनंद आए, इसके लिए सेरेलॅक के दो-दो स्वाद-शिशु को चौथे महीने से दीजिए सेरेलॅक व्हीट.छठे महीने से दीजिए सेरेलॅक एपॅल.

कृपया डिब्बे पर दिए गए निर्देशों का सावधानी से पालन कीजिए ताकि इसके बनाने में स्वच्छता रहे और आपके शिशु को मिले स्वस्थ और संतुलित पोषाहार.

Nestlé

अपने शिशु को दीजिए सैरेलॅक का अनूठा लाभ!

R.K.SWAMY/FSL/9015-HI

चित्रों को पहचानिए और जीतिए
1000 कलर पैन सैट
राज कॉमिक्स
चित्र प्रतियोगिता
COLOUR SET
हत्यारी ट्रेन
अक्ल की करामात
जौहर और हवाई डाकू
जासूस टोपीचंद और सितारों की फौज
प्रतियोगिता की विस्तृत जानकारी व प्रवेश पत्र प्राप्त करने के लिए राज कॉमिक्स के मई माह के यह चार नये कॉमिक्स पढ़िये और राज कॉमिक्स चित्र प्रतियोगिता में भाग लीजिए।
15 मई को सर्वत्र उपलब्ध
■ हत्यारी ट्रेन
■ अक्ल की करामात
■ जौहर और हवाई डाकू
■ जासूस टोपी चंद और सितारों की फौज
प्रत्येक का मूल्य चार रुपये
प्रकाशक: राजा पॉकेट बुक्स 17/36, शक्ति नगर, दिल्ली-110007
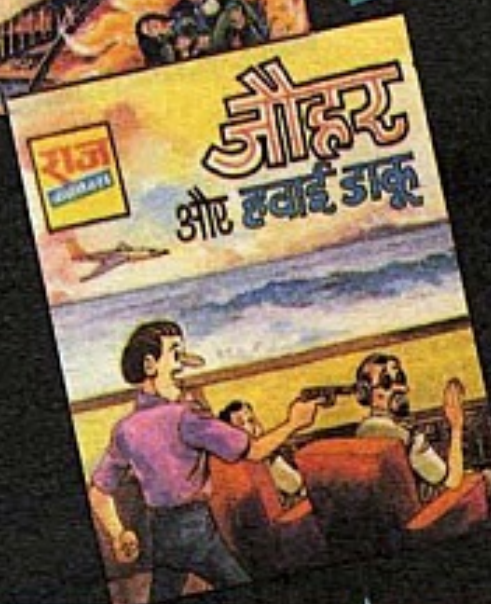
चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

बाल्य, कौमार, यौवन तथा वार्धक्य ये चारों विश्वके प्रत्येक प्राणी के चार प्राकृतिक धर्म हैं। और उनका पालन करनें में हर एक का हित है। मगर कुछ लोग अधिकार व ऐश्वर्य के प्रलोभन में आकर उनके गुलाम बन जाते हैं और इन चार धर्मोंसे अलग जीवन बिताने का यत्न करते हैं। 'एक रानी की कहानी' इस बातकी पुष्टि करेगी।

अमर वाणी

भवंत्यपि निष्फलंव, धनर्द्धिर्भवति कृपण पुरुषस्य,
ग्रीष्मातप संतप्तस्य, निजकच्छायेव पथिकस्य।

[जिस प्रकार ग्रीष्मकाल के धूप में चलनेवाले व्यक्ति के लिये उसकी अपनी छाया भी किसी कामकी नहीं होती; वैसे ही कंजूस के द्वारा इकट्ठा किया गया धन उसके लिये निरुपयोगी सिद्ध होता है।]

वर्ष : ४० मई १९८८ अंक : ९
एक प्रति : २-५० :: वार्षिक चन्दा : ३०-००

चंदा मामा बूझ के हारे –
छोटे छोटे, प्यारे प्यारे,
रंगबिरंगे कैसे तारे ?
तारे नहीं, ये जेम्स हैं सारे.
Cadbury's GEMS
जो चाहे खेले, जो चाहे खाले.
Cadbury's GEMS
OBM/2286/HN

'चन्दामामा' के संवाद

शांति कपोत

विश्व के कोने कोने से हज़ारों लोगों ने सोविएत रूस के अधिनेता तथा अमेरिका के अध्यक्ष के नाम इस आशय के पत्र भेजे कि, वे किस प्रकार के विश्व में जीने की आशा रखते हैं। उन में २,५०,००० पत्र 'शान्ति कपोत' के प्रचार के अंतर्गत, आणविक निःशास्त्रीकरण के हेतु प्रयत्न करने के लिये, उन राष्ट्रों के अधिपतियों से अनुरोध के समर्थन में हैं।

चीनी का मीनार

कोलानपुर के एक होटल में यूप रिचर्ड एक कर्मचारी है। उसने एफ़ेल टावर के नमुने पर चीनी की एक मीनार (टावर) निर्माण की है। ४७ कि.ग्रा. चीनी से २.४३ मीटर ऊँची इस चीनी की मीनार का निर्माण करने में ५० घंटों का समय बिताया है

अंगारक की यात्रा

माइकेल गोर्बाचेव ने यह आशय व्यक्त किया है कि सोविएत संघ, तथा अमरिका मिलकर अंगारक ग्रह में मनुष्यों के साथ अंतरिक्ष यान भेजने की कामना करते हैं। करेन मुलहांसर नामक एक प्रमुख महिला ने यह समाचार दिया है कि हालही में व्हाइट हाऊस में अमेरिका के प्रमुख व्यक्तियों के साथ चर्चा करने के बाद ही गोर्बाचेव ने यह आशय व्यक्त किया है।
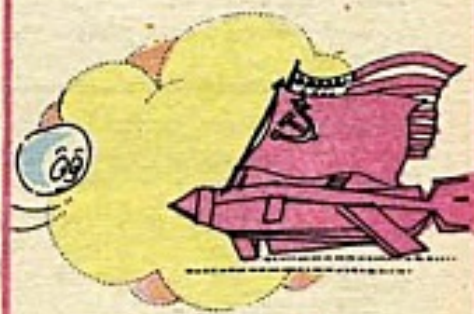
वन के अतिथि

भुवनेश्वर के समीप के नन्दन-कानन में टेक्सास से दो चिम्पानझी, एक बबून बन्दर और तीन बन्दर, तीन मार्मोस्ट जाती के बन्दर और दो कंगारू लाये गये हैं। दो महीनों के अंदर टेक्सास से और ९३ जानवर यहाँ मँगावाये जा रहे हैं। इस के अदल-बदल के समझौते के अनुसार नन्दन-कानन के वनाधिकारी एक जोड़ा सफ़ेद बाघ टेक्सास भेजनेवाले हैं।

कला-व्यापार

शोभाकान्त नामक एक चित्रकार को एक बार कुछ धन की सखत आवश्यकता थी। इसलिये उसने अपने एक उत्तम चित्र को बेचना चाहा। परंतु कोई भी उस चित्रके लिये चार-पाँच मुद्राओं से अधिक देना नहीं चाहता था।

यह समाचार मिलते ही चित्रकार का गोविन्दराम नाम का एक मित्र वहाँ आ पहुँचा और वह अब चित्र को लेकर वहाँ से चला गया। उसने चित्र को एक ऐसे स्थानपर लटका दिया जहाँ अनायास ही लोगों का ध्यान आकर्षित हो। यदि कोई उसे खरीदने की इच्छा प्रकट करता, तो गोविन्दराम खीझकर कहता कि वह उस चित्र को बेचना नहीं चाहता। किसी गाँव के ज़मीन्दार को चित्र का वृत्तान्त मालूम हुआ। उसने आकर ज़बरदस्ती ही गोविन्दराम के हाथ में दो सौ मुद्राएँ थमाई और चित्र लेकर चला गया।

इसके बाद गोविन्दराम शोभाकान्त के घर गया और उसे दो सौ मुद्राएँ देने लगा तो विस्मय में आकर शोभाकान्त पूछने लगा,"तुम यह धन मुझे किसलिये दे रहे हो?"

"यह तो तुम्हारे चित्र का मूल्य है। तुम्हारा ही है यह धन—ले लो।" गोविन्दराम ने जवाब दिया।

"मेरा चित्र इतने अधिक दाम में कैसे बिक गया? इधर कोई उसे चार-पाँच मुद्राओं से ज्यादा देने को तैयार नहीं था। शोभाकान्त का आश्चर्य और ही अधिक बढ़ गया।

गोविन्दराम ने सारा वृत्तान्त सुनाकर कहा,"चित्र बनाना ही नहीं, बल्कि उसे बेचना भी तो एक कला ही है न?"
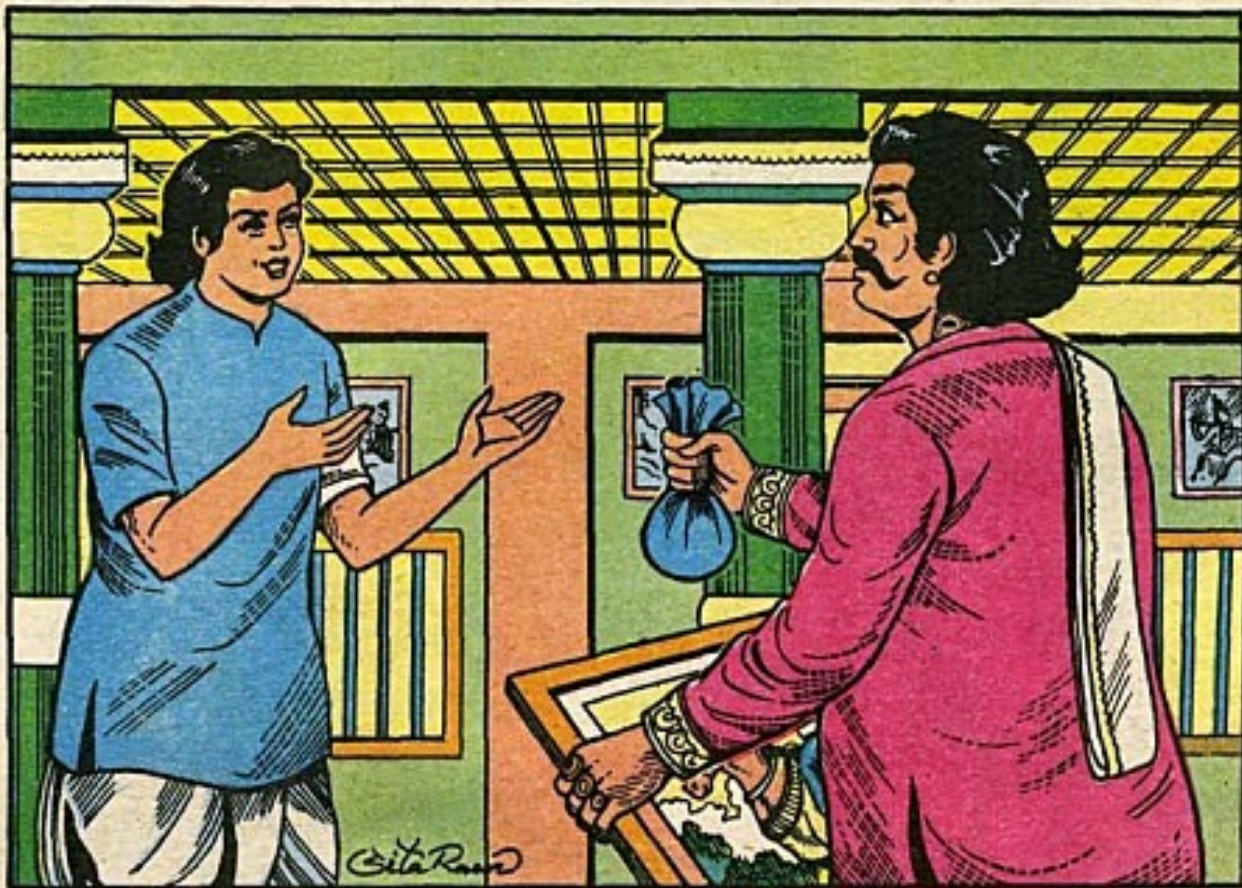
एक रानी की कहानी

किसी ज़माने में फ्रांस देश में एक महारानी राज्य करती थी। सुंदर संगमरमर से उस का आलीशान महल बनाया गया था। उस की छत चाँदी से मढ़ी थी। उस महल की हर चीज़ सोने की बनी थी। उन पर रंग-बिरंगे नव-रत्न जड़े थे। महल में आमोद-प्रमोद की सभी सामग्रियाँ जुटी थीं। चारों तरफ़ फल-फूलों से लदे वृक्ष थे। गुलाब की क्यारियाँ थीं। एक लता-मंडप में शानदार झूला लगा हुआ था। जगह-जगह पानी के फौवारे थे जो आसपास के वातावरण को शीतल बनाते। चाँदनी रातों में रानी यहाँ घंटों बिताती। दरअसल वह रानी एक जादूगरनी थी। सभी आवश्यक चीज़ें उसे पल भर में प्राप्त हो जातीं

उस के बस के बाहर की बात केवल एक थी, अपनी युवावस्था को कायम रखना उसे संभव न था। अपनी जवानी में वह रूपवती थी। अब उस का शरीर ऐसा जीर्ण-शीर्ण हो गया था कि उस से मिलने के लिए आनेवाले लोक सीधे उस के चेहरे को देख न पाते, बल्कि कोई न कोई बहाना बना कर उस की तरफ़ से मुँह मोड़ लेते। किसी समय के उस के काले बाल अब सफ़ेद हो गये थे। मुँह में एक भी दाँत न बचा था। आँखें और कान अपना काम करने में असमर्थ हो रहे थे। हमेशा कोई-न-कोई बीमारी उस के साथ चिपटी रहती। वैद्यों की दवाएँ कुछ असर न करतीं थीं। बुढ़ापे के कारण उस के लिए उस की सारी संपत्ति बेंकार-सी हो गई थी। वह दिन भर खाँसती रहती और अपना झुर्रियाँ भरा चेहरा लिये इधर उधर विचरती थी।

इस स्थिति में आईने में अपना चेहरा देखने की कभी उसे इच्छा तक न होती थी। वह कानी थी, ज़रा भी सुन्दर कोई मुनष्य मिल गया, तो वह उस से बात तक न करती थी। अपने महल में उस ने काने और लँगड़े नौकरों को ही काम पर रखा था।

स्वाती लाल

एक दिन २५ साल उम्र की एक युवती रानी के पास आई । वह असाधारण सौंदर्यशालिनी थी, नाम उसका था—मेरी । मेरी की खूबसूरती देख कर हर कोई उस पर लट्टू हो जाता था । उसे लगा—रानी भी उसका सौंदर्य देख कर प्रसन्न हो जाएगी । पर—

उस युवती को देखते ही रानी आग-बबूला हो उठी । उस ने पूछा—"वह कौन हिम्मतवाला है जो इस युवती को मेरे पास लाया है? तुरन्त भेज दो उस को यहाँ !"

ज़रा भी डगमगाए बग़ैर मेरी ने पूछा—"महारानीजी, मैं मंत्र-तंत्र जानती हूँ । अपना सौंदर्य और जवानी मैं आप को दे सकती हूँ । आप उसे स्वीकार करेंगी ? आप की व्यथा को मैं जानती हूँ । बुढ़ापे की वजह से आप परेशान है ! आप का यह अपार वैभव और संपत्ति आप को सुखी नहीं बना पा रही है । ज़रा अपने को दर्पण में देखिए तो !"

"महारानीजी, मैं इसी लिए आप के पास आई हूँ । आप की व्यथाओं को दूर करना मेरे लिए बाएँ हाथ का खेल है । मैं आप का उपकार करने आई हूँ । आप मेरी सहायता को चाहे स्वीकार करें, चाहे ठुकरा दें ! मैं अपना स्वार्थ साधने नहीं आई हूँ । मैं आई हूँ, आप को मेरी जवानी बख्शने !"

यह सुन कर रानी का गुस्सा ग़ायब हो गया । मन-ही-मन वह प्रसन्न हो उठी । मेरी की ओर बारीकी से देखते हुए रानी ने पूछा—"यह बात है! तो बताओ, उस के बदले में तुम क्या
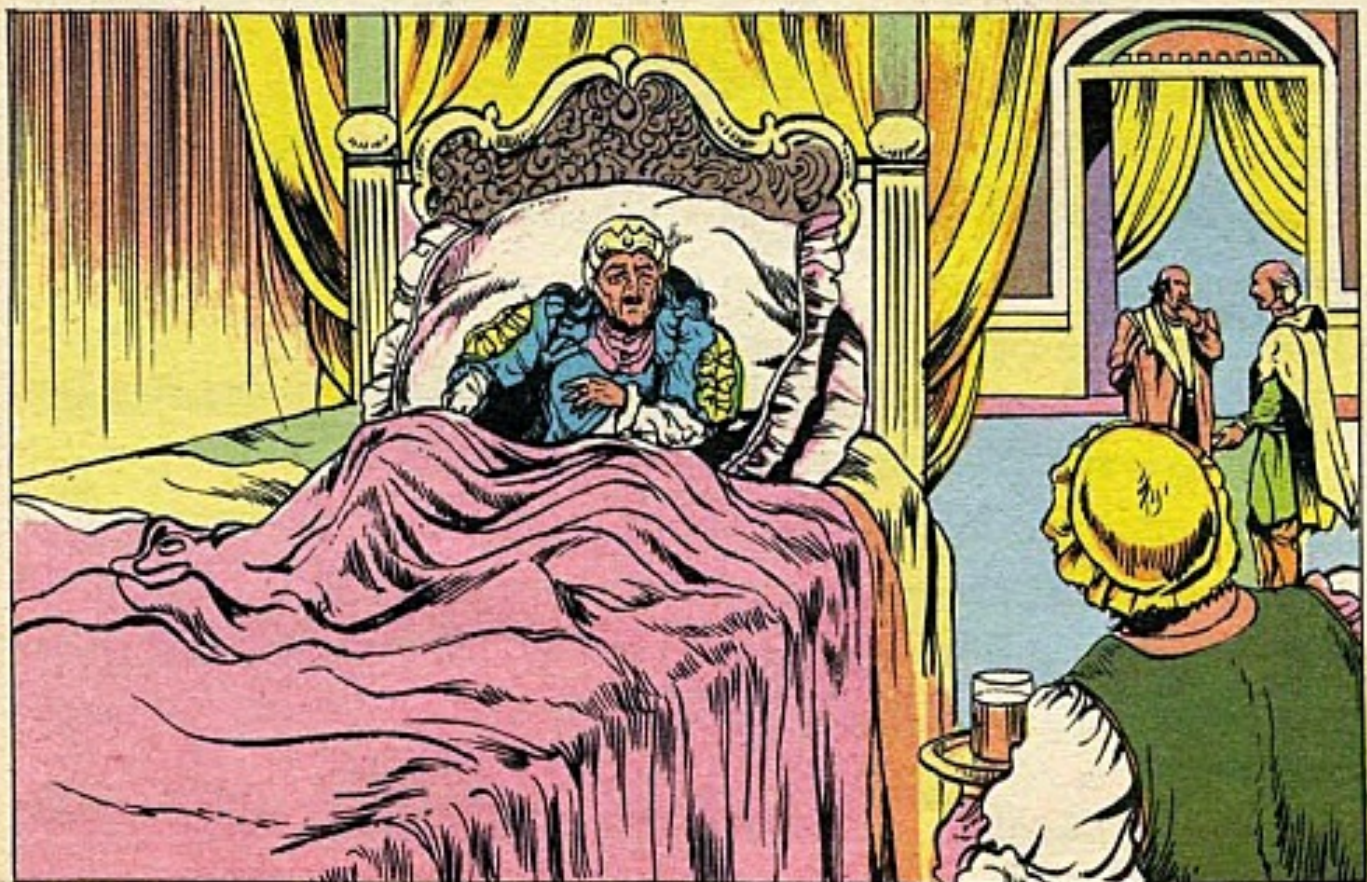
चाहोगी ?"

मेरी ने झट जवाब दिया—"आप का सब कुछ! अपना सारा धन, यहाँ तक कि अपना मुकुट भी आप को मुझे देना होगा। मैं अपनी जवानी आप को यों ही कैसे दे सकती हूँ। उस का उचित दाम मुझे मिलना चाहिए। अगर आप को यह मंज़ूर नहीं है, तो मैं चली अपने रास्ते! आप का बुढ़ापा आप को मुबारक़!"

यह उत्तर सुन कर रानी गुस्सा हो गई और गरज कर बोली—"क्या कहा? तुम्हें मेरा सारा धन और मुकुट चाहिए? मैं बदसूरत और बूढ़ी यों ही मर जाऊँगी, मगर धन और मुकुट कभी नहीं दूँगी। चली जाओ यहाँ से तुम।"

मेरी निराश हो वहाँ से चल दी।

कुछ दिन बीते, रानी बीमार हो गई। उस की परिचारिकाएँ सेवा करतीं, पर नाक-भौंह सिकोड़ते हुए। राजवैद्यों ने परीक्षा कर निदान किया—अब रानी चन्द सप्ताहों की मेहमान है।

रानी को मेरी की याद आई, उसने उसे बुलवा लिया। आने पर कहा—"मेरी, तुम्हारी शर्त मुझे मंज़ूर है। मेरा सारा धन और मुकुट अब तुम्हारा। तुम्हारी जवानी मुझे दे दो।"

मेरी ने शंका भरे स्वर में रानी से कहा—"महारानीजी, आप अपनी संपत्ति मुझें सौंप रहीं हैं। बदले में अगर मैं अपना सौंदर्य और यौवन आप को दे दूँ, तो मैं उसी क्षण बूढ़ी और अपाहिज़ बन जाऊँगी। पहले आप ने मेरी शर्त नहीं मानी, अब मुझे डर लग रहा है।"

रानी ने युवती की बड़ी तारीफ़ की और अपनी मीठी बातों से उसे संतुष्ट कर मनवा लिया। दोनों

के बीच समझौता हो गया। पल भर में दोनों का रूप बदल गया।

रानी अब सुन्दर युवती बन गई। उस की देह पर सोने की आभा चमकने लगी। शरीर पर यौवन की दमक और आँखों में बिजली की चमक देखते ही बनती। सब लोग उस की सुंदरता पर मुग्ध हो गये। लेकिन अब इसे किसी देहात में टूट-फूटे झोंपड़े में चिथड़े पहन कर रहना होगा।

अब मेरी की ओर देख कर हर कोई घृणा करने लगा। फिर भी वह एक शानदार राजमहल में रहनेवाली रानी थी।

मेरी ने अपना रूप देखने के लिए आईना मंगवा लिया। वृद्धावस्था की अपनी सूरत को देख उसे अपने प्रति घृणा हुई और उस ने अपना मुँह अपने हाथों से ढँक लिया। उसने आदेश दिया कि कोई भी उस के सामने न आवे। इर्द-गिर्द फैली धन-राशियों को देख उस ने अपने को सांत्वना देना चाहा। लेकिन रत्नों के ढ़ेर उसे वृद्धावस्था की यातनाओं से बचा न सके।

इस के पहले मेरी अपने गाँव में सखियों के साथ वृक्ष और लता-मंडपों की शीतल छाया में नृत्य किया करती थी। अब लाठी के सहारे बिना वह खड़ी भी नहीं रह सकती थी। दाँतों के अभाव में केवल द्रव पदार्थों का सेवन कर पाती। अब स्वादिष्ट भोजन उस के भाग्य में नहीं रहे।

अब मेरी को पछतावा होने लगा। संपत्ति और मुकुट के लोभ में उसने पागल की भाँति अपने यौवन व सौंदर्य को बेच दिया। ढ़ेर धन-संपत्ति पास में होने से क्या फ़ायदा अगर उस का उपयोग नहीं किया जा सकता।

पहले मेरी भेड़ चराते खेलते-गाते खुशी से अपने दिन बिताया करती थी। अब राज्य के मामलों को समझना और उन्हें सुलझाना उस से नहीं बनता था। मेरी पहले जहाँ रहती थी, रानी उस गाँव में पहुँची। राज्य और राजवैभव के अभाव में उसे बड़ा दुख हुआ। हाँ, वह बुढ़ापे की व्यथाओं को ज़रूर भूल गई, पर ग़रीबी की ज़िंदगी बिताना उसे दुश्वार होने लगा।

चिंतित होते हुए वह सोचने लगी—"तो क्या मुझे ये मैले चिथड़े पहन कर अपने दिन गुज़ारने पड़ेंगे ? इन कपड़ों में मेरा सौंदर्य और यौवन

निखर सकता है ! इस छोटे-से गाँव में मेरी खूबसूरती और जवानी की तारीफ़ करनेवाला है कौन? ये सब लोग तो निरे गँवार ठहरे! उफ़, मैं ने मूर्ख बनकर सुंदरता और यौवन के पीछे अपनी अपार संपत्ति और मुकुट खो दिया ! कितना अच्छा होगा, अगर मैं उन्हें दुबारा प्राप्त कर सकूँ?"

रानी समझ न सकी कि अब उसे क्या करना चाहिए। वह अत्यन्त दुखी हो गई। उसे दूसरी ओर यह चिन्ता भी सताने लगी कि अगर वह उस बुढ़ापे को पुनः प्राप्त करेगी, तो संभवतः वह शीघ्र ही मर जाएगी ।

खूब गहराई के साथ सोच कर एक दिन वह एक निर्णय पर पहुँची। बड़ी से बड़ी रानी को भी एक दिन मौत का शिकार होना ही है। बुढ़ापे की व्यथाओं और यातनाओं को हिम्मत से सहन करना ही होगा। सौंदर्य और यौवन के लालच में राज्य और राज्याधिकार को छोड़ना निरा पागलपन है ।

यों सोचते हुए रानी पुनः राजमहल को लौट आई। मेरी ने तुरन्त भाँप लिया कि रानी किस हेतु से लौटी है। कुछ अधिक बातें किए बगैर दोनों अपने अपने पुराने रूपों में परिवर्तित हो गईं ।

दूसरे ही क्षण रानी अपनी वृद्धावस्था के रूप को देख कर घबड़ा गई और बोली—"मेरी,मैं ने ग़लती की। दरअसल तुम्हारा यौवन ही अच्छा है । क्या हम फिर से अदल-बदल कर लें?"

पर मेरी ने अब रानी की बात न मानी। उसने समझाया—"रानीजी, हमारे दोनों रूपों को मैं ठीक ढंग से समझ गई हूँ। यातनाओं का सामना करते हुए उलझनों के बीच फँसे रहना मुझे बिलकुल पसन्द नहीं। जवानी को लेकर ज्वार की रोटियाँ खाते हुए भेड़ें चराने में सच्चा आनन्द है। तुम्हारे राज्य और वैभव के मज़े मैं ने खूब देखे ! अपने को नहीं चाहिए। तुम्हारा राज्य और संपत्ति तुम्हीं को मुबारक़ ! उन का खूब उपयोग करो। मैं दुबारा ग़लती नहीं करूँगी। अच्छा, मैं चली—" कहते हुए मेरी उछलती-कूदती हुई राजमहल से भागी ।

सच्चा प्रेम

अमरावती नामक शहर में आनन्द गुप्त एक मशहूर जौहरी था। उसके गंगा, यमुना और सरस्वती नामक तीन कन्याएँ थीं। जब ये लडकियाँ विवाहयोग्य हुयीं, तभी उनकी माँ स्वर्ग सिधार गयी।

आनन्द गुप्त की अधेड़ उम्र में संतान हुयी थी। इस कारण लड़कियाँ जब विवाहयोग्य हुयीं, तब तक वह वृद्धावस्था में पहुँच चुका था। अब वह अस्वस्थ भी रहने लगा। उसने सोचा कि अब तीनों लड़कियों का विवाह एक साथ ही कर के अपनी संपत्ति तीन हिस्सों में बाँट दें और खुद विश्राम कर लें।

आनन्द गुप्त ने एक दिन अपनी बेटियों को बुलाकर समझाया—"बेटियों, मैं बूढ़ा हो गया हूँ। व्यापार का काम देखने की भी शक्ति अब मुझ में नहीं रही है। वैद्यों का कहना है कि मैं एकाध साल से ज़्यादा जीऊँगा नहीं। इसलिए मैं विचार कर रहा हूँ कि, तुम तीनों का विवाह कर के अपनी अंतिम इच्छा पूरी करने के लिए काशी यात्रा पर चल पड़ूँ। काशी से लौटने पर मैं अपना शेष जीवन बारी बारी से तुम तीनों के पास बिताऊँगा। तुम लोगों की क्या राय है ?"

बड़ी पुत्री गंगा थोड़ी देर सोचकर बोली, "पिताजी, वैसे आप का कहना ठीक ही है। लेकिन विवाह के बाद पत्नी को अपने पति के अधिकार में रहना पड़ता है। आप यदि मेरे पास रहने आ जायें तो मेरे पति वह बात मानेंगे कि नहीं, इस सम्बन्ध में मैं अभी अपना वचन कैसे दे सकती हूँ।"

अपनी कन्या की बातों की सचाई आनन्द गुप्त ने मान ली।

इसके बाद उसने अपनी दूसरी कन्या यमुना से पूछा, "बताओ यमुना, तुम्हारा क्या विचार है?"

यमुना ने कहा, "दीदी का कहना सही है। विवाह से बाद पति का व्यवहार कैसे रहेगा यह अभी से कहना कठिन है। इसलिए मैं सोचती

प्रभाकर पुराणिक

हूँ....'' इतना ही कहकर वह रुक गयी ।

''कोई बात नहीं, पूरी बात कहो बेटी ।'' आनन्द गुप्त ने कहा ।

''पिताजी, मेरा रिश्ता आप इसी शहर में कायम कीजिए । ऐसी हालत में मैं भले ही दूसरे घर में रहूँ, मगर समीप ही रहूँगी न? जब-तब आकर आप की देख भाल कर सकूँगी ।'' यमुना ने अपना कहना पूरा किया ।

''अच्छी बात है, बेटी । तुम्हारा विचार भी ठीक ही है ।'' यह कहकर वे चेहरे पर प्रश्नचिन्ह ले तीसरी कन्या की ओर मुड़े ।

इस समय तक अपनी दीदियों की बातें सुनने वाली सरस्वती की आँखों में आँसू छलछला आये । वह गद्‌गद् स्वर में बोली, ''पिताजी, मेरी शादी की जल्दी ही क्या है? पहले से ही आप अस्वस्थ हैं, ऐसी हालत में आप का अकेले काशी यात्रा पर निकलना मुझे कतई पसंद नहीं । मैं भी आप के साथ चलूँगी । इसके बाद किस्मत में जो बदा है, हो के रहेगा ।''

बेटी का अपार प्रेम देख आनन्द गुप्त की आँखों में आनन्दाश्रू भर आये । अपने अंगोछे से उनको पोंछते हुए उन्होंने कहा, ''पगली, रोओ मत । मेरे प्रति तुम्हारा प्रेम व आदर देख मुझ में यह विश्वास बँध रहा है कि मैं कुछ साल और निश्चय ही जीऊँगा ।'' यह कहते कहते उस ने छोटी कन्या के सिर पर हाथ फेर लिया ।

इस के बाद आनन्द गुप्त ने अपनी आधी संपत्ति दो बड़ी बेटियों को बाँट दी और उनकी शादियाँ संपन्न की । और छोटी कन्या सरस्वती को साथ लेकर काशीयात्रा के लिए चल पड़ा ।

छः महीने बाद काशी यात्रा से लौटकर आनन्द गुप्त ने योग्य वर देखकर सरस्वती का भी विवाह करा दिया । छोटे जामाता को घर-जमाई बनाकर अपनी जौहरी-दूकान की ज़िम्मेदारी उसी को सौंप दी । छोटे जामाता बड़े सुयोग्य व्यक्ति निकले । सरस्वती और उस के पति के सहवास में आनन्द गुप्त के दिन सुख से कटने लगे । जामाता को व्यापार में अपने अनुभव से सलाह देते देते कुछ और साल शान्तिपूर्वक अपना जीवन बिताया ।

सच्चा ख़ज़ाना

किसी जंगल के छोरपर एक ग़रीब औरत रहती थी। उसके रामदीन नाम का दस साल का एक लड़का था। औरत जंगल में फल, जड़ीबुटी आदि जमा कर के पड़ोस के गाँवों में बेचती थी और अपना व बेटे का पेट पालती थी। लड़का रामदीन भी जंगल में अपनी माँ की मदद करता था।

अपनी माँ के कष्ट देखकर रामदीन मन ही मन बहुत दुखी हो उठता था। उसके मन में एक बार यह विचार आया, कि जंगल से कोई ख़ज़ाना प्राप्त कर माँ के हाथ सौंप दे, जिस से उसे कड़ी मेहनत करने की ज़रूरत न रहे।

एक दिन वह इसी विचार में जंगल में विचर रहा था। अपनी आदत के अनुसार सब से यह भी पूछता रहा—"हे पेड़, तुम्हारी उम्र क्या है? हे पक्षी, तुम्हारा नाम क्या है?"

एक जगह उसे विचित्र पोशाक में एक नाटा आदमी—एक बौना—दिखाई दिया। बौने के सिरपर विभिन्न फूलों से बना मुकुट था। वह किसी पेड़ से सट कर खड़ा था और कुछ गुनगुना रहा था।

रामदीन ने उस के पास जाकर अपनी माँ के कष्टों के बारे में सब सुनाया और पूछा, "यहाँ क्या कोई ख़ज़ाना गड़ा हुआ है? उसे मैं अपनी माँ को देना चाहता हूँ।"

इसपर वह बौना ठहाके मारकर हँस पड़ा और बोला, "क्या कहा, ख़ज़ाना? ख़ज़ाना तो माँ को कभी का मिल चुका है।" यह कहकर वह घनी झाड़ियों के बीच अदृश्य हो गया।

रामदीन ने घर लौटकर सारी हक़ीकत माँ को सुनायी और पूछा, "माँ, तुम ने मुझे ख़ज़ाने की बात क्यों नहीं बतायी?"

बेटे के सिर को प्यार से सलहाते हुये माँ ने मुस्कुराकर कहा, "अरे बेटे, मेरा ख़ज़ाना तो तुम्हीं हो।" यह कहकर उसने रामदीन को चूम लिया।

सोने की घाटी

६

[ज्ञानभूमि के राजा ने पुजारी के वास्तविक चरित्र को देख आवेश में आकर उसका सिर काट डाला। उसी मनोदर्पण के द्वारा राजा ने जयराज के उत्तम चरित्र का परिचय पाया और विष वायुओं को प्रसारित करनेवाली पर्वत-श्रेणियों को पार करने के लिए अदृश्य हो जाने का रहस्य बताया। उसका प्रयोग करके जयराज अदृश्य हो गया ..... आगे पढ़िये।]

जयराज को यह जानने में ज़रा समय लगा कि वह कैसे अदृश्य होकर पुनः मानव का रूप धारण कर सका। उसने जान लिया कि वह एक चट्टानपर पड़ा हुआ है। वह इतना कमज़ोर हो गया था कि अपने हाथ-पैर हिलाने की भी शक्ति उस के शरीर में नहीं थी। वह निश्चेष्ट पड़ा था। सिर में हल्का-सा ज्वर। सारे शरीर में एक तरह की ग्लानि थी। वह सोच रहा था, जाने उस के स्वास्थ्य में यह परिवर्तन एकाएक कैसे आ गया! उस ने धीरे से आँखें खोलकर अपनी दृष्टि चारों तरफ दौडायी। सर्वत्र घना अँधेरा छाया हुआ था। उसे अस्पष्ट दिखाई दिया कि उसके पास एक मुनि बैठा हुआ है, जिस की आँखें नीलमणी जैसे चमक रहीं हैं। जयराज उसे देख अपने आप ही बुदबुदाया, "भगवान्! मैं फिर किसी पुजारी के चँगुल में तो नहीं फँस गया ?"

"लड़के तुम कौन हो? शताब्दियों से बंद इस गुफा का द्वार पार कर तुम मेरे पास कैसे पहुँच

मनोज दास

गये?" मुनि ने विस्मय से पूछा ।

"शताब्दियों से? इस का मतलब कि आप शताब्दियों से इस गुफ़ा से बाहर निकले ही नहीं?" जयराज विनोद ने उठकर बैठते हुए पूछा।

"हाँ, हाँ। मगर तुमने मेरे सवाल का जवाब नहीं दिया! मैं पूछ रहा हूँ तुम कौन हो ? कहाँ से आ रहे हो ? तुम्हारे यहाँ आने का मक़सद क्या है ? मेरे इन सवालों का जवाब तुम दे सकोगे ?" मुनि ने पूछा ।

विनोद ने संक्षेप में अपना परिचय दिया। सारा वृत्तान्त सुनकर मुनि अविचल बैठकर ध्यान मग्न हो गया। एक घंटा बीतने पर उसने फिर अपनी आँखें खोली। तबतक जयराज उसके सन्निध बड़ी शांति अनुभव करते हुए बैठा रहा। आँखें खोलकर मुनि ने जयराज के सिरपर हाथ फेरते हुए कहा, "बेटा, तुम पवित्र आत्मा हो। इसी लिए अदृश्य रूप में प्रवास करनेवाले तुम सीधे मेरी ओर आकृष्ट हो गये, और गुफ़ा में प्रवेश कर पाये। अब तुम चिन्ता मत करो। सब कुछ ठीक को जाएगा। तुम एक सुरक्षित स्थान पर पहुँच गए हो। मैं सब प्रकार तुम्हारी सहायता करूँगा। तुम्हारी क्षणिक कमज़ोरी अब दूर हो गयी है। तुम अपने कार्य में सफल हो जाओगे। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ। तुम्हारी सब इच्छाएँ पूरी हो जाएँगी "

मुनि की बातें सुनकर विनोद को ऐसा प्रतीत हुआ, मानों वह आनन्द तडाग में डुबकियाँ ले रहा हो। उसकी सारी कमज़ोरी जाती रही। उसकी नस नस में शांति एवं आनन्द व्याप्त हो गया ! विनोद ने जान लिया कि वह मुनि महिमान्वित एवं दयालु है ।

"चलो, बाहर चलें । तुम्हें नया प्रदेश दिखाऊँगा। मैंने भी बहुत लम्बे अरसे से यह प्रदेश नहीं देखा है ।" यह कहकर मुनि आगे बढ़ा । दोनों गुफ़ा के मुखद्वार तक पहुँचे । विनोद-जयराज ने द्वार पर ढँके चट्टान को हटाना चाहा। पर वह उसे ज़रा भी हिला नहीं पाया ! उस ने पूरा ज़ोर लगाया। पर चट्टान की शिला टस से मस न हुई। अपनी असमर्थता दिखाते हुए वह मुनि की ओर देखने लगा। मुनि को उस की दया आई ।

"ठहरो, मैं उसे हटा देता हूँ।" कहते हुए मुनि ने अपने दण्ड से उसे छुआ और चट्टान उछलकर दूर जा गिरी! दोनों गुफ़ा से बाहर आये। यह गुफा एक पर्वत पर थी। पर्वत के नीचे एक सुन्दर शहर दिखाई दिया।

"हे भगवान्! इस पर्वत पर चारों तरफ फैले हुए पेड़-पौधे और पंछी कहाँ गये? पर्वत को घेरकर फैला जल कैसे गायब हुआ?" इस प्रकार कुछ मन से और कुछ प्रकट बोलते हुए मुनि जयराज की ओर मुड़ा। और उसने उसे उस प्रदेश के बारे में वार्ता सुनायी।

किसी समय उस प्रदेश में भयंकर जंगल फैला हुआ था। उसके परिसर में मुनि को छोड़कर अन्य लोगों का निवास न था। एक बार अपने देश के राजा से दी गयी यातनाओं से तंग आकर एक ग़रीब व्यक्ति उस पहाड़ी प्रदेश में पहुँच गया था। उसे भूख-प्यास सता रही थी, ऐसे में उसे एक हरे-भरे पहाड़ पर कुछ पक्षी कोई फल खाते दिखाई दिये। वह तुरंत पहाड़ पर पहुँचा और उन पंछियों से आधा खाया फल लेकर उस पर टूट पड़ा। उसकी भूख-प्यास मिट गयी और वह खुश हुआ।

उसके मन में यह संदेह पैदा हुआ कि इतने भारी खरबूज को ये छोटे पंछी इस पहाड़ पर कैसे ढोकर ले आ पाये! इस प्रकार विचार करते हुए उसने उस परिसर को परखकर देखा। पाश्र्व में ही उसे एक बेल दिखाई दी। उसने जान लिया कि वह फल तो इसी पहाड़ पर पैदा हुआ है। उसे

बड़ा अचरज हुआ।

"क्या, तुम इस विचार से विस्मय में आ रहे हो कि चट्टानों से भरे इस पहाड़ पर खरबूज कैसे पैदा हो सकता है?" यह पूछते हुए पास की एक गुफ़ा से एक मुनि वहाँ आ पहुँचा।

"जी हाँ, स्वामी। बड़ी ही आश्चर्य की बात है न?" गरीब ने कहा।

"मैं स्वयं प्रतिदिन अपनी योगशक्ति से इन पंछियों के लिए एक खरबूज पैदा कर इन को खिलाता हूँ।" मुनि ने कहा।

"ऐसी बात है? तब तो महात्मा, मुझे भी एक पक्षी के रूप में बदल डालिए। आप की कृपा से रोज़ खरबूज खाकर जीऊँगा। वैसे मारे ग़रीबी के परेशान हूँ। पेट की समस्या दिन-रात सताती

रहती है। अगर पक्षी बन कर खाने की समस्या हल हो गई, तो जीवन कितना सुन्दर होगा ! चिन्तारहित जीवन के मज़े कुछ और ही हैं ! क्या आप मेरी मदद कर सकेंगे ? मैं आप का एहसान कभी न भूलूँगा। स्वामीजी, दया कीजिएगा।" गरीब आदमी ने मिन्नत की।

"ऐसा क्यों? तुम चाहते हो तो मैं खरबूज को इतना बड़ा बना सकता हूँ कि उस से तुम्हारी भूख भी मिट सकती है। इस के लिए तुम को पंछी बनने की ज़रूरत नहीं है। मानव के रूप में रह कर भी तुम्हें खाने को फल मिल सकता है। और इसमें मेरे लिए कोई कठिनाई नहीं। मेरी योग-शक्ति का उपयोग तुम्हारे लिए हुआ, तो मुझे संतोष ही है।" मुनि ने सांत्वना दी।

"जो आज्ञा।" कहकर गरीब ने दोनों हाथ उठाकर मुनि को प्रणाम किया। फिर भी उस के चेहरे पर उदासी साफ़ नज़र आ रही थी।

उसे देख मुनि ने पूछा, "तुम्हारी भूख-प्यास की समस्या तो हल हो गयी। अब यह उदासी क्यों?"

"आपने मेरा बहुत बड़ा उपकार किया, समझ में नहीं आता कि आपके प्रति अपनी कृतज्ञता कैसे व्यक्त करूँ। यह मेरी पहली चिन्ता है, और मेरी दूसरी चिन्ता यह है कि, मेरी अपनी भूख प्यास की कोई समस्या नहीं रही, मगर मेरा परिवार वहाँ अपने दिन कैसे काट रहा होगा ? मैं अकेला यहाँ खाता रहूँ और उधर परिवार के लोग भूखे रहे तो मैं यह कैसे बर्दाश्त करूँ ? उन के प्रति भी तो मेरा कर्तव्य है न ! स्वामीजी, इसी कारण मैं उदास हूँ।" गरीब ने अपनी चिन्ता का कारण साफ़-साफ़ कह दिया।

"तुम अपने परिवार को भी यहाँ बुला लाओ, उनके भी खाने योग्य बड़े खरबूज की सृष्टि मैं करूँगा।" मुनि ने समझाया।

ग़रीब ने सिर झुकाकर प्रणाम किया, फिर भी ग़रीब के चेहरे की उदासी वैसे की वैसे ही बनी रही।

"फिर क्या सोच रहे हो?" मुनि ने पूछा।

"आपकी कृपा से मैं अपने परिवार सहित भूख-प्यास से मुक्त हो गया, मगर अब मन की चिन्ता यह कि जिन बन्धु व मित्रों की संगत में उमर के इतने साल काटे, उनको कैसे भूल

सकूँ?" ग़रीब ने कहा ।

"ओह, तुम्हारी चिन्ता का कारण इतना ही है ? तब तो अपने परिवार के साथ अपने बन्धु-बान्धव और मित्रों को भी यहाँ ले आओ ।" मुनि ने कहा ।

"हे करुणानिधान, मैं अपने बन्धु-मित्रों को यहाँ ले आऊँ तो क्रमशः उनकी संख्या बढ़ती रहेगी न? तब इतनी सारी आबादी का पेट एक खरबूज कैसे पाल सकेगा ? यही मेरी शंका है ।" ग़रीब ने विनयपूर्वक निवेदन किया ।

मुनि पलभर मौन रहकर फिर बोला, "मैं गुफा के अन्दर जाकर तपस्या करना चाहता हूँ । मेरी तपस्या कब तक चलेगी यह केवल भगवान ही जानता है । लेकिन यहाँ पर अपनी जो योग-शक्ति छोड़ जाऊँगा, उस के प्रभाव से तुम लोगों को प्रतिदिन एक खरबूज मिलता रहेगा । प्रतिदिन तुम लोगों में से एक यहाँ पहुँच जाय और ऊँची आवाज़ में यह कह जाय कि, दूसरे दिन सबेरे आवश्यक परिमाण का खरबूज बेल पर लटकता हुआ मिलेगा । तुम लोग उसे आपस में बाँटकर खा जाओ । जो लोग उसे खाऍंगे उन्हें दिन भर पुनः भूख-प्यास नहीं लगेगी ।" मुनि ने कहा ।

ग़रीब अपने गाँव लौट गया और अपने परिवार व बन्धु-मित्रों सहित पुनः वहाँ आ पहुँचा ।

पहाड़ी-तल के हरे भरे मैदान में उनकी छोटी छोटी झोंपडियाँ बन गयीं । मुनि ने वहाँ पर इकट्ठे हुअे लोगों को समझाया—"सुनो लोगों, तुम्हारी भूख-प्यास की समस्या हल हो चुकी है, अब सत्य की साधना ही तुम्हारे जीवन का लक्ष्य है । तुम लोग अपने लक्ष्य की साधना में लग जाओ ।"

इसके बाद मुनि ने सब को ध्यान की विधि सिखायी, फिर पहाड़ की गुफ़ा में प्रवेश करके अपनी तपस्या उन्होंने आरंभ की । इस प्रकार कई शताब्दियाँ बीत गयीं ।

मुनि के द्वारा यह वृत्तान्त सुनकर जयराज ने पूछा, "महात्मन्, इस समय हम जो यह शहर देख रहे हैं, वह उस समय के शरणार्थियों की अगली पीढ़ियों द्वारा निर्मित शहर ही होगा । गुफ़ा के मुख द्वार पर मैंने खरबूज की बेल भी देखी थी । अभी तक अगर वे लोग खरबूज ग्रहण कर

रहे होंगे, तो आश्चर्य की कोई बात नहीं।"

"चलो, हम शहर में प्रवेश कर के वहाँ की विशेषताओं का पता करेंगे।" यह कहकर मुनि आगे चल पड़ा।

जयराज ने मुनि का अनुसरण किया।

पहाड़ से नीचे तलहटी की दिशा में जो रास्ता जा रहा था, उसके दोनों तरफ फूलों के पौधे व लताएँ फैलीं थीं।

मुनि और जयराज थोड़ी देर में पहाड़ी-तल पर बसे शहर के द्वार के समीप पहुँचे। रंग-बिरंगी पगड़ियाँ धारण किये दो दृढ़काय व्यक्ति अपने हाथों में शूल लिये द्वार पर पहरा दे रहे थे। द्वार के बाहर लोगों की भारी भीड़ इकट्ठा थी।

"हम दूर देश के यात्री हैं। पहाड़ पर जाकर देखने की आप अनुमति नहीं देंगे?" भीड़ में से एक ने पूछा।

"अनुमति नहीं देंगे। अद्‌भुत खरबूजा प्राप्त होनेवाले इस पहाड़ पर जाने की योग्यता केवल हमारे नेता ही रखते हैं। वे भी प्रतिदिन पहाड़ पर केवल यह बताने जाते हैं, कि दूसरे दिन कितने लोगों के पेट भरनेलायक खरबूज चाहिये। केवल इसकी सूचना देने के लिये ही।" द्वारपाल ने कहा।

द्वारपाल की बातें सुनकर मुनि ने कहा, "वह नेता सर्वप्रथम एक ग़रीब के रूप में पहाड़ पर पहुँचे हुए व्यक्ति का वंशज होगा।"

इसके बाद दोनों वह द्वार पार कर अन्दर पहुँचे।

"हम भीतर प्रवेश कर रहे हैं, फिर भी द्वारपाल ने हम को रोका कैसे नहीं? बात क्या है?" जयराज ने आश्चर्य में आकर मुनि से पूछा।

"हम दोनों इस वक्त अदृश्य रूप में चल रहे हैं, और हमारी बातें भी उनको सुनायी नहीं दे रही हैं।" मुनि ने कहा।

जयराज आश्चर्य में आ गया। वे दोनों एक गली में होकर आगे गये और एक ऐसे मंडप के समीप पहुँचे, जिस के मुख्य द्वार पर एक शिला पर लिखा हुआ था—'निःशब्द'।

कुछ अधिकारी चारों तरफ़ फैले घास के मैदानपर टहलते हुए, जब तब मण्डप के भीतर झाँक रहे थे।

"मुझे इस स्थान का स्मरण है। उस ज़माने में
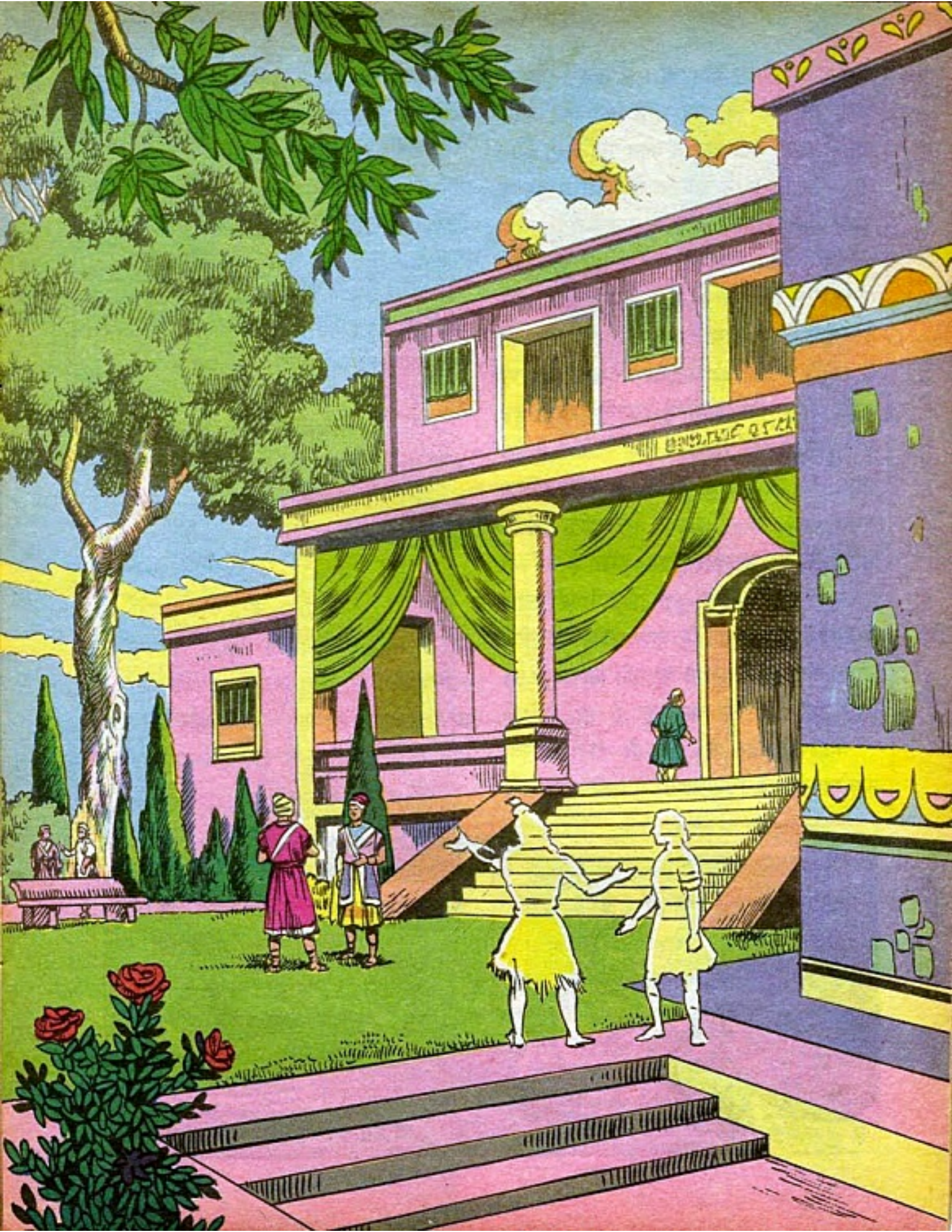
यहाँ एक विशाल बाग था। मैं उन्हें समझाकर चला गया था कि यहाँ उन्हें क्या क्या करना होगा। चलो, देखें अब वे लोग क्या करते हैं।" यह कहकर मुनि ने जयराज के साथ मण्डप के भीतर प्रवेश किया। कतार में बनाये गये आराम कुर्सियों जैसे आसानों पर अनेक स्त्री-पुरुष लेटकर सो रहे थे। कौन कितनी देर सोता है—इस बातका हिसाब अधिकारी लोग लगा रहे थे। मुनि ने वहाँ का वातावरण देखकर यह भी भाँप लिया कि ज़ोर से खर्राटे भरते हुए सोनेवालोंको वहाँ प्रोत्साहन दिया जाता है। कुछ समय बाद इन सब का हिसाब लगाकर अधिक समय तक सोकर ज्यादा से ज्यादा खर्राटे भरनेवाले को पुरस्कार दिया जाता है।"

गहरी निद्रा में निमग्न कुछ लोगों के प्रति क्रोध में आकर मुनि ने उन के केश पकड़ कर नीचे खींच लिया। जयराज ने भी मुनि का अनुकरण करते हुए वैसा ही किया।

थोड़ी ही देर में नींद में से अचानक जागनेवालों की चिल्लाहटों से सारे मण्डप में हलचल मच गयी। अधिकारियों से कुछ भी करते न बना, वे चुप रह गये।

इसके बाद मुनि उस मंडप में से बाहर निकला। जयराज ने उनके पीछे चलते हुए पूछा, "उन लोगों के प्रति आप के क्रोध का कारण क्या है, क्या मैं जान सकता हूँ? बेचारे आराम से सोते हैं तो इस में बुरा क्या है? उन का आराम आप को भला क्यों अखरा! उन का शांतिपूर्वक सोना आप को क्यों मंजूर नहीं? वे न कोई पाप कर रहे थे, न किसी को सता रहे थे!"

"मैं ने उन के पूर्वजों को यह सिखाया था कि आँखें मूँदकर कैसे ध्यान करना चाहिये। लेकिन ये लोग ध्यान की बात भूलकर गहरी नीन्द सोने और खर्राटे भरने में स्पर्धा कर रहे हैं।" मुनि ने कहा।

फिर वे दोनों मंदिर जैसी एक इमारत के निकट पहुँचे। मन्दिर के प्रांगण में नगर के अधिकारियों की सभा हो रही थी। उन में नगर का युवा नायक भी था। जयराज और मुनि उनके बीच पहुँचे। मन्दिर के द्वार बन्द किये गये।

(क्रमशः)

शैतान की पढ़ाई

दृढव्रती विक्रमादित्य पेड़ के पास लौट आये। शव को पेड़ से उतारकर कन्धे पर लादा और हमेशा की तरह मौन होकर श्मशान की ओर चलने लगे। शव में वास करनेवाले बेताल ने तब पूछा—"राजन्, इस श्मशान पर पिशाच, लोमड़ी और उल्लू स्वेच्छापूर्वक संचार करते हैं। समझ में नहीं आता एक राज्य के शासक होते हुए आप यहाँ यातनाएँ क्यों झेल रहे हैं? इसे देख हँस लूँ या रो दूँ?

एक छोटी-सी शैतान लगन की पक्की और बड़ी सहनशील थी। एक अध्यापक अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए घर छोड़ चला, और अपने कार्य को अधूरा ही छोड़ कर लौट आया। उनकी कहानी याद आती है, तो मुझे लगता है एक दिन आपकी अवस्था भी उसकी-सी होगी। वह कहानी मैं आपको सुनाता हूँ। सुनकर आपका भी श्रम-परिहार होगा।"

बेताल कथा
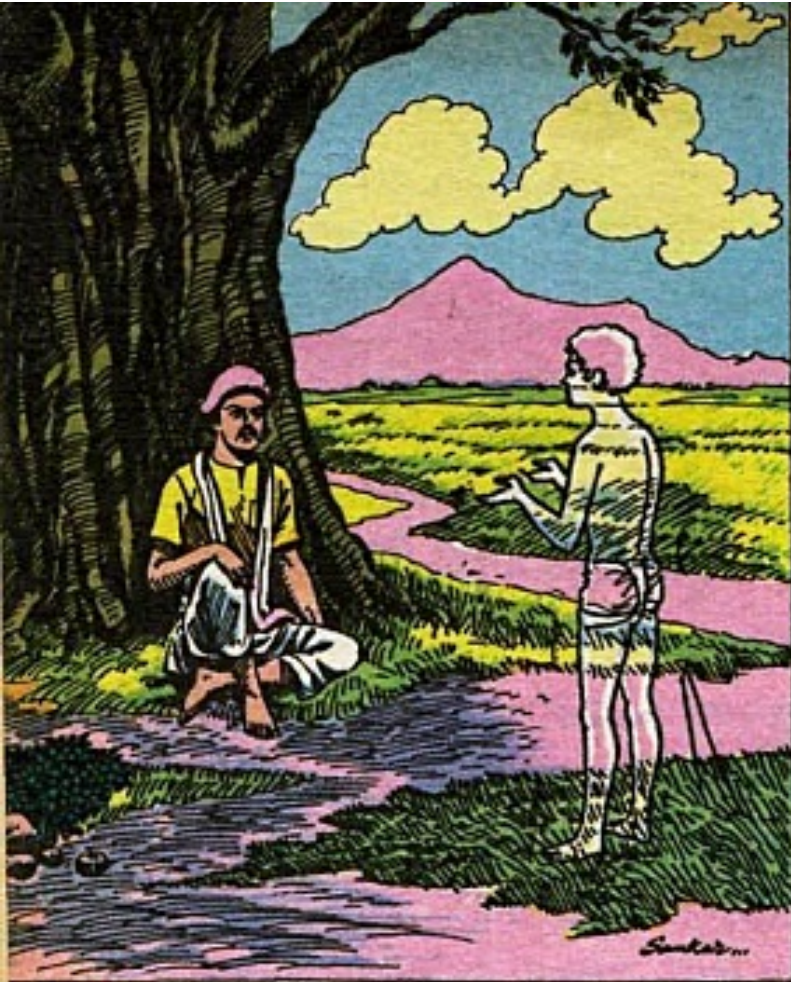
यों कहकर बेताल ने कहानी शुरू की—धर्मपुर का निवासी बलरामदास गाँव में एक अध्यापक था। गुरु-दक्षिणा के रूप में जो धन मिलता, उस से ज्यों त्यों अपनी आजीविका चलाता। पर इस में उसे बड़ी कठिनाई होती थी। पत्नी उसके साथ रोज़ झगड़ा करती थी। परेशानी में वह अपने दिन बिताता था। एक दिन अपनी पत्नी से नाराज़ हो वह घर से चल पड़ा। गाँव के बाहर एक इमली का विशाल वृक्ष था, उसकी छाया में बैठ गया।

उस समय एक छोटी-सी शैतान इमली के पेड़ पर से उसके सामने कूद पड़ी और धीरे से बोली—"पंडित, घबराइए मत, मैं आप के पास पढ़ने के लिए आई हूँ। मुझे आप से और कुछ नहीं चाहिए। आप कई छात्रों को विद्या पढ़ाते हैं। मुझे भी कुछ पढ़ाईए। मेरी इतनी-सी प्रार्थना आप स्वीकार नहीं करेंगे?"

बलरामदास शैतान को देख घबड़ा गया। उसने पूछा—"तुम कौन हो? पढ़ने से तुम्हें क्या लाभ? मेरे और छात्रों की बात और है। मैं अपने छात्रों को जो कुछ पढ़ाता हूँ, तुम्हें भी पढ़ा सकता हूँ। मगर मुझे लगता है, उस से तुम्हें कुछ लाभ न होगा। ज़रा समझाओगी पढ़ने से तुम्हें क्या लाभ होगा?"

छोटी शैतान ने निवेदन किया—"पढ़ने में मुझे बड़ी रुचि है। बचपन में ही मेरे पिताजी की मृत्यु हुई। मेरी माँ बड़ी मेहनत करके जो कमाती, मेरे पालन-पोषण में लगाती। माँ की कमाई से मुश्किल से घर की ज़रूरतें पूरी हो पातीं, इस लिए मैं ने भी कुछ काम करके कमाना-धमाना शुरू किया। मेरे मन में बराबर पढ़ने की इच्छा रहा करती, इस लिए मैं कुछ रक़म बचाती रही। एक बार माँ अचानक बीमार पड़ी। उसकी दवा-दारू में सारी बचत ख़तम हो गई। माँ बीमारी से उठी नहीं। दुखी होकर मैं ने नदी में कूदकर आत्महत्या कर ली। चूँकि मेरी पढ़ने की इच्छा अधूरी रह गयी, मैं शैतान बन गई हूँ। आप मुझे जो काम सौंपिंगे, मैं करूँगी। बस, आप मुझे पढ़ाइए।"

"मुझे धन चाहिए। कहीं से ला दोगी? मैं अपने छात्रों को पढ़ाता हूँ, तो वे मुझे गुरु-दक्षिणा देते हैं। तुम को पढ़ाऊँ तो तुम्हें भी मुझे धन देना होगा! है तुम्हारे पास कुछ धन? या

मुफ़्त में पढ़ना चाहती हो?" बलरामदास ने पूछा

छोटी शैतान ने सवाल किया—"आप को कितना धन चाहिए ?"

"एक हज़ार स्वर्ण-मुद्राएँ !" बलरामदास ने अपने लालच का प्रदर्शन किया ।

"मेरे पास इतना धन तो है नहीं । राजा के ख़ज़ाने से चोरी कर ले आऊँ ?"

"जैसी तुम्हारी इच्छा । कैसे भी ले आओ, मुझे धन चाहिए। तुम कहाँ से धन लाती हो इस से मुझे क्या मतलब ? तुम मेरा शुल्क दे सको, तो मैं तुम्हें ज़रूर पढ़ाऊँगा ।" बलरामदास ने कहा ।

शैतान ने पूछा—"ठीक है, लेकिन मैं धन लाऊँगी तो आप मुझे ज़रूर पढ़ाएँगे न ?"

"तुम्हें एक और काम भी करना होगा। रोज़ मेरी बीबी कोई न कोई बखेड़ा खड़ा कर मेरी शांति में बाधा डाल देती है । तुम उसको धमकाओ और मेरे आदेश का पालन करने पर राजी करो ।" बलरामदास ने अपनी दूसरी शर्त सामने रखी ।

"अच्छी बात है, मैं ऐसा ही करूँगी। लेकिन आप मुझे पढ़ाएँगे न ?" अपनी बात पर ज़ोर देते हुए शैतान ने फिर पूछा ।

बलरामदास ने कुछ और काम करने के लिए शैतान को समझाया ।

बात यह थी कि बलरामदास ने अपने गाँव के

एक बुजुर्ग से कुछ कर्ज़ ले रखा था। एक साल बाद उसने अपना कर्ज़ चुकाया । लेकिन बुज़ुर्ग का कहना था कि बलरामदास ने कर्ज़ नहीं चुकाया । बलरामदास के पास कर्ज़ चुकाने की कोई गवाही न थी। इस कारण कतिपय लोगों ने बलरामदास को दोषी ठहराया तो कुछ लोगों ने बुज़ुर्ग को ।

इस पर यह निश्चय किया गया कि छोटी शैतान बुज़ुर्ग के अन्दर प्रवेश करके गाँववालों को सच्ची बात मालूम करा दे । इससे सारे गाँव भर में प्रचार होगा कि बलरामदास सत्यवादी है, पवित्र आचरणवाला है और इसी कारण उसको अद्भुत शक्तियाँ प्राप्त हो गई हैं । अपनी अद्भुत शक्तियों का प्रदर्शन करने में छोटी शैतान उसकी सहायता करेगी ।

पढ़ाई के प्रति विशेष रुचि होनेके कारण छोटी शैतान ने बलरामदास की सारी शर्तों को मान लिया । परिणाम यह हुआ कि चन्द दिनों में बलरामदास की क़िस्मत खुल गई ।

बलरामदास के पास एक हज़ार स्वर्णमुद्राएँ जमा हो गईं । पत्नी उस की हर बात को मान लेती थी । गाँव के बुज़ुर्ग ने अपनी गलती मान ली । बलरामदास अब अपनी अद्भुत शक्तियों का प्रदर्शन करने लगा ।

धीरे धीरे उसके भक्तों के संख्या बढ़ने लगी । उनके भेंट व उपहारों को पाकर बलरामदास संपन्न बन गया । अब वह हवा में उड़ने लगा, पानी पर चलने लगा । हवा में से वस्तुओं को निर्माण करने लगा । सब प्रदेशों के रहस्य जानकर बताने लगा । एक बार उस देश का राजा भी उस से मिलने आ गया ।

यह सब कुछ होने पर भी बलरामदास ने छोटी शैतान को पढ़ाना प्रारंभ नहीं किया । दरअसल उसने बच्चों को पढ़ाना ही बन्द कर दिया ।

रोज़ छोटी शैतान पढ़ाई का प्रारंभ करने के बारे में याद दिलाया करती । उसने शैतान को समझाया—"सुनो, आजकल मैं तुम्हारी वजह से बहुत व्यस्त हो गया हूँ । इसी लिए मैं ने अपने शिष्यों को पढ़ाना भी बन्द कर दिया है । इस स्थिति में, तुम्ही बताओ, मैं तुम को कैसे पढ़ा सकता हूँ ?"

छोटी शैतान ने आरोप किया—"मैं ने अपनी सारी शर्तों को अब पूरा किया । तिस पर भी आप ने मुझे नहीं पढ़ाया तो इस का मतलब है कि आप ने मुझे धोखा दिया !"

"तुम्हें पढ़ने की ज़रूरत ही क्या है ? मेरी वजह से तुम्हारी पूजा हो रही है । मुझे जो आदर-सम्मान प्राप्त हो रहा है, उस का कारण तुम्हीं हो । ऐसा ही समझो कि यह सब तुम्हारा ही आदर-सम्मान है । मैंने खूब विद्या पढ़ी, जो मुझे आदर-सम्मान नहीं दे पाई । तुम अनपढ़ हो, फिर भी तुम्हारी वजह मुझे आदर मिला ! विद्या अद्भुत शक्तियाँ नहीं प्रदान करती, लेकिन सुशिक्षित व्यक्ति भी अद्भुत शक्तियाँ रखनेवाले के सामने सिर झुकाते हैं । इस लिए तुम पढ़ने की बात भूल जाओ और मज़े में रहो । बलरामदास ने समझाया ।

"मुझे विद्या चाहिए, आदर नहीं!" छोटी शैतान ने स्पष्ट रूप से कहा ।

"तो मुझे क्षमा कर दो । मैं मजबूर हूँ, तुम्हें पढ़ा नहीं सकता ।" बलरामदास ने कहा ।

"यह बताने का कष्ट करें, आप मुझे क्यों नहीं पढ़ा सकते ? आप ने अगर संतोष-जनक उत्तर नहीं दिया तो मैं आपका और आप के परिवार का सर्वनाश करके ही चल दूँगी ।" छोटी शैतान ने धमकाया ।

थोड़ी देर बलरामदास मौन रहा । फिर बोला—"तुम कुछ भी करो, मैं तुम्हें सच्ची बात बता रहा हूँ । सुनो, मेरी पढ़ाई मुझे आदर और सम्मान नहीं दे सकी । इस कारण मुझे धन और यश की चाह रही । तुम ने विद्या पाने के लिए मेरी मिन्नतें कीं, पर मैंने अपनी इच्छा की पूर्ति की चोरी, दगा और हिंसा के बल पर ! अगर मैं ने तुम को विद्या दी तो तुम कहोगी मैंने जो कुछ किया सब ग़लत किया । मैं नहीं चाहता कि मेरे कारनामों को कोई ग़लत और दोषपूर्ण कह दे । इस लिए मैं ने निश्चय किया है कि मैं भविष्य में किसी को नहीं पढ़ाऊँगा । बता दो, तुम्हें कैसे पढ़ाऊँ ?"

क्षण भर के लिए बलरामदास की ओर दयापूर्ण दृष्टि दौड़ाकर छोटी शैतान अदृश्य हो गई ।

बलरामदास ने गाँव के सभी निवासियों को बुलाकर निवेदन किया—"मेरी अद्भुत शक्तियों को जो लोग देखते हैं, उनका मनोरंजन अवश्य होता है, पर इस से उनका कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता । मेरी शक्तियों से मुझे यश मिल गया,

पर दूसरी ओर मेरी यश की कामना जाती रही। विश्व-कल्याण के हेतु मेरी अद्भुत शक्तियों को त्याग कर अब मैं एक साधारण मानव बन कर रहना चाहता हूँ ।"

यह कहानी सुनाकर बेताल ने पूछा—"राजन्, मेरे मन में शंका है । छोटी शैतान के लिए बलरामदास का उत्तर संतोषजनक न होता, तो शैतान ने उस का सर्वनाश करने की धमकी दी थी। क्या बलरामदास के उत्तर से उसे संतोष हो गया ? उसने बलरामदास की ओर दयापूर्ण दृष्टि से क्यों देखा ? अपनी अद्भुत शक्तियों का त्याग करके बलरामदास ने एक सामान्य मानव बनना चाहा, यह कहाँ तक ठीक है ? मेरी इन शंकाओं का समाधान जानते हुए भी अगर आप नहीं देंगे तो आप का सिर फटकर टुकडे टुकडे हो जाएँगे ।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा —"छोटी शैतान ने बलरामदास की ओर दया-दृष्टि की, इसका एक कारण है—शिक्षा के द्वारा जिन बातों को उसने दोषयुक्त जान लिया, शैतान द्वारा उन्हीं ग़लतियों को करवाया। उसने स्वयं इस बात को मान भी लिया। उसने जो शिक्षा प्राप्त की, उसपर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इस से स्पष्ट हो जाता है कि अपने छात्रों को जो विद्या बलरामदास सिखाता, वह उन पर कोई प्रभाव नहीं करती। उस तथ्य को जानने पर छोटी शैतान के मन में शिक्षा से प्रति विरक्ति पैदा हुई। इसी लिए उस ने बलरामदास की ओर दया-दृष्टि से देखा।

लेकिन बलरामदास का यह कथन कि 'जगत् के कल्याण के हेतु वह अपनी अद्भुत शक्तियों को त्याग रहा है,' सफ़ेद झूठ है । छोटी शैतान मदद न करे तो क्षण भर में सारी अद्भुत शक्तियाँ नष्ट हो सकती हैं । इस रहस्य को छिपाने के विचार से बलरामदास ने गाँववालों को अपनी त्याग की बात कहकर उनका विश्वास संपादन किया ।"

राजा के इस कथन पर मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो पुनः पेड़ पर जा बैठा ।

(कल्पित)

राजा और चाण्डाल

प्राचीन काल में उत्कल देश पर पुरुषोत्तम देव नाम के एक राजा राज्य करते थे। वे जगन्नाथ के महान् भक्त थे। वे मानते थे कि उनका राज्य श्री जगन्नाथ स्वामी का है और वे उन के सेवक बन कर राज्य का संचालन करते हैं।

उन की इस प्रवृति के कारण दिन-ब-दिन उन की खूब प्रगति हो रही थी। उन के राज्य में प्रजा सुखी और संपन्न थी। सब लोग उन का गुण-गान करते थे।

जगन्नाथपुरी नगर में हर साल आषाढ़ मास में रथ-यात्रा संपन्न होती है। उस उत्सव में संमिलित होने के लिए हज़ारों की तादाद में लोग आते हैं। रथ-यात्रा में भाग लेनेवाले तीन रथों के नीचे राजा स्वयं झाड़ू दिया करते थे। राजा द्वारा झाड़ू लगाया जाने पर ही रथों को खींचा जाता।

एक बार राजा पुरुषोत्तम देव दक्षिण-दिग्विजय पर चल पड़े और काँचीपुर की राजकुमारी पद्मावती को देखा। वह असामान्य सुंदरी थी। उस को देख कर पुरुषोत्तमजी उस पर मोहित हो गये और उस के साथ विवाह करने का निश्चय कर लिया। दूत के द्वारा अपना प्रस्ताव पद्मावती के पिता की ओर भेजा, तो उन्होंने अपनी सम्मति दी। पुरुषोत्तम के स्वागत पर उत्कल देश में जाने के साथ रथोत्सव को देखने का भी उन्होंने संकल्प किया।

रथयात्रा के दिन देवालय से लेकर उद्यान-भवन तक सारा रास्ता लोगों से खचाखच भरा हुआ था। शंख-ध्वनियों से वातावरण गूँज उठा जनता में कोलाहल मचा था। बलभद्र, सुभद्रा तथा जगन्नाथ की उत्सव-मूर्तियाँ लाकर रथों पर स्थापित की गईं।

पुरुषोत्तम अब तक काँची-नरेश से वार्तालाप कर रहे थे, एकाएक उठ खड़े हुए और झाड़ू उठा कर रथों के नीचे सफ़ाई का काम करने लगे।

उड़िया लोककथा

जनता में हर्ष-ध्वनियाँ गूँज उठीं ।

पुरुषोत्तमजी को झाड़ू देते देख काँची के राजा नाक-भौं सिकोड़ने लगे । इतने सेवकों के होते हुए राजा का झाड़ू लगाना उन को अजीब लगा। झाड़ू देना तो चाण्डाल का काम है ऐसी उन की मान्यता थी । रथ-यात्रा समाप्त होने पर वे काँचीपुरी लौट आये और उत्कल के राजा को संदेश भेजा—"मैं अपनी पुत्री का विवाह चाण्डाल से नहीं करूँगा ।"

यह संवाद पाकर पुरुषोत्तम बुरी तरह बिगड़े। उन्होंने काँची पर धावा बोल दिया । पराक्रमी पुरुषोत्तम युद्ध में विजयी हुए। उन्होंने राजकुमारी पद्मावती को बन्दी बनाया ।

लेकिन अब पुरुषोत्तम के मन में पद्मावती से विवाह करने की इच्छा न रही। उन्होंने अपने मंत्री को बुलवाकर आदेश दिया—"सुनो, इस लड़की के पिता ने मुझे चाण्डाल कहा है; अब इस का विवाह किसी झाड़ू देनेवाले के साथ कर दो ।"

"जो आज्ञा महाराज !"मंत्री ने कहा ।

पर मंत्री बड़ा दयालू था। उसने ऐसा नहीं किया। पद्मावती को वह अपने घर ले गया। अपनी पुत्री से समान पद्मावती की देख-रेख करता रहा । पद्मावती घर में सुरक्षित है यह समाचार मंत्री-परिवार ने गुप्त रखा ।

चन्द महीनों के बाद फिर रथोत्सव के दिन आये। प्रथा के अनुसार राजा झाड़ू लेकर रथों के नीचे सफ़ाई का काम करने लगे ।

ऐसे में मंत्री पद्मावती को लेकर वहाँ पहुँचे और बोले—"महाराज, क्षमा कीजिए। आप के आदेश का पालन करने में विलम्ब हुआ। इस कन्या के लिए झाड़ू देनेवाला आप से बढ़कर सुयोग्य पति नहीं मिल सकता। कृपया इस के साथ विवाह कीजिएगा ?"

अब तक पुरुषोत्तम का गुस्सा भी ठंडा हो गया था। मंत्री की युक्ति पर प्रसन्न हो राजा ने बड़े ठाट-बाट से पद्मावती के साथ विवाह संपन्न कराया ।

उस वंश की संतान आज भी रथोत्सव के दिन मंदिर में झाड़ू देती है ।

काव्य कथा :

शकुंतला ३

मुनि दुर्वासा के शाप के कारण दुष्यन्त शकुंतला को भूल गये । इस कारण शकुंतला को बहुत दुख हुआ । इस हालत में माता मेनका ने शकुंतला को सांत्वना देकर उसे एक आश्रम में पहुँचा दिया । वहाँ शकुंतला ने एक पुत्र-रत्न को जन्म दिया । उसका नाम रखा गया 'भरत' । शकुंतला भरत का लाड़-प्यार से पाल-पोस करने लगी ।

इस तरह कुछ वर्ष बीत गये । एक दिन एक मछुए के जाले में बहुत देर तंक मछलियाँ नहीं फँसी । आखिर बड़ी मुश्किल से एक बड़ी मछली जाले में फँस गई । उसके साथ मछुआ खुश खुश घर पहुँचा ।

मछुए ने अपनी पत्नी के हाथ मछली दी और उसे रसोई बनाने को कहा । पत्नी ने मछली को काटा तो उस के अंदर से एक अंगूठी निकली । उसे देख मछुआ बहुत खुश हुआ । उस ने निश्चय किया अब यह अंगूठी खासे अच्छे दाम पर बेच देगा ।

मछुआ अंगूठी लेकर एक सुनार के पास पहुँचा और अंगूठी बेचने का अपना इरादा ज़ाहिर किया। सुनार ने अंगूठी को परख कर देखा। पर अंगूठी मछली के पेट से प्राप्त हुई इस बात पर उसे विश्वास नहीं हुआ।

इस लिए सुनार मछुए को अंगूठी के साथ राजा दुष्यंत के पास ले गया। राज्य के अधिकारियों ने सोचा कि मछुए ने राजमहल से अंगूठी चुरा ली होगी। राजा ने भी अंगूठी की जाँच-पड़ताल की।
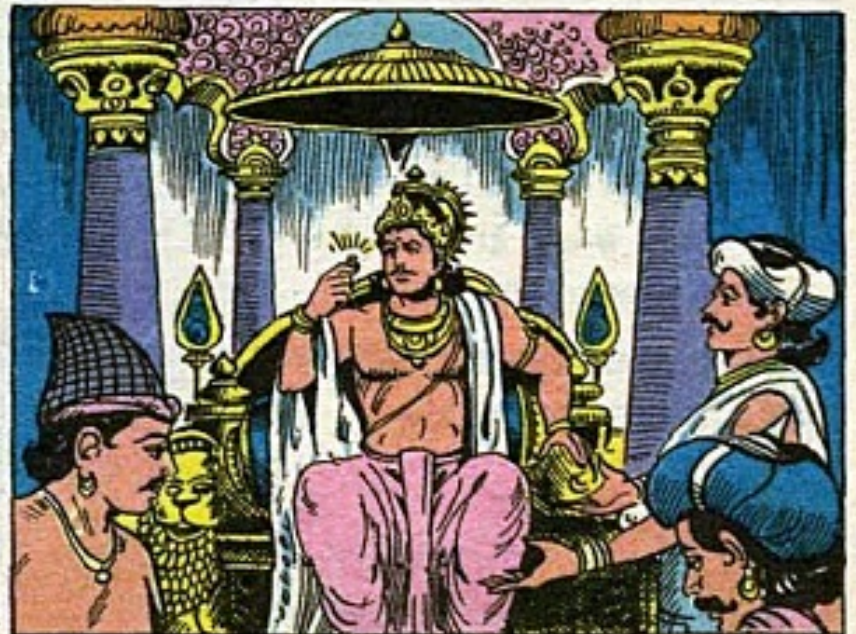
अंगूठी को देखते ही राजा दुष्यंत को शकुंतला के साथ बीते दिन याद आए। अब मुनि दुर्वासा के शाप का प्रभाव ख़तम हो चुका था। राजा ने मछुए को पुरस्कार देकर बिदा किया। राजमहल में राजा ने शकुंतला के साथ जो व्यवहार किया था, उस से उस का मन व्याकुल हो उठा।

दुष्यंत ने अपने दूतों को कण्व मुनि के आश्रम में भेजा, पर शकुंतला वहाँ न थी। उस का पता पाने के लिए दुष्यंत ने सभी दिशाओं में अपने दूत भेजे।

पर शकुंतला कहीं न मिली। इस पर राजा को बहुत चिन्ता हुई। एक दिन राजा वन में विहार कर रहे थे, तो सिंह शावक के साथ खेलते हुए एक बालक को देखा। राजा विस्मय-विभोर हो गए।

घोड़े से उतर कर राजा ने उस बालक को अपनी बाहुओं में लिया और उस का परिचय पूछा। बालक की मीठी बातें सुन कर राजा अतीव प्रसन्न हुए। राजा की उंगली पकड़ कर बालक उन को अपनी पर्णशाला ले आया।

अपने पुत्र भरत को पिता दुष्यंत का हाथ थामे आश्रम के सामने देख कर शकुंतला को क्षण भर विश्वास नहीं हुआ। शकुंतला की आँखों से आनंदाश्रु बह निकले। वह समझ गई कि दुर्वासा मुनि के शाप के कारण ही राजा उसे भूल गये थे।

शकुंतला को राजसम्मान के साथ राजधानी हस्तिनापुर लाया गया। शकुंतला के आने से दुष्यंत का जीवन आनन्दमय हो गया। उन्होंने न्याय के साथ 'बहुजन हिताय' शासन किया। रानी के रूप में शकुंतला का अभिषेक किया गया।
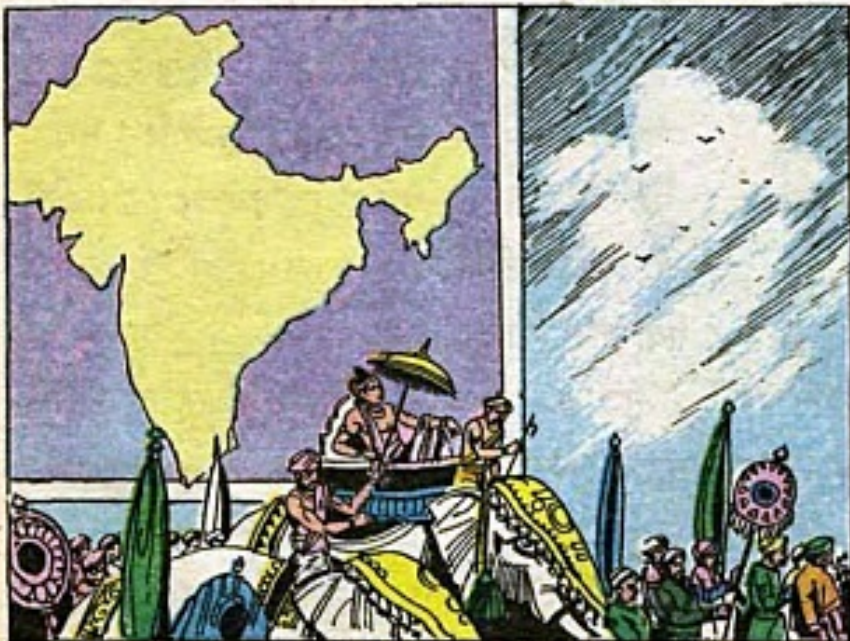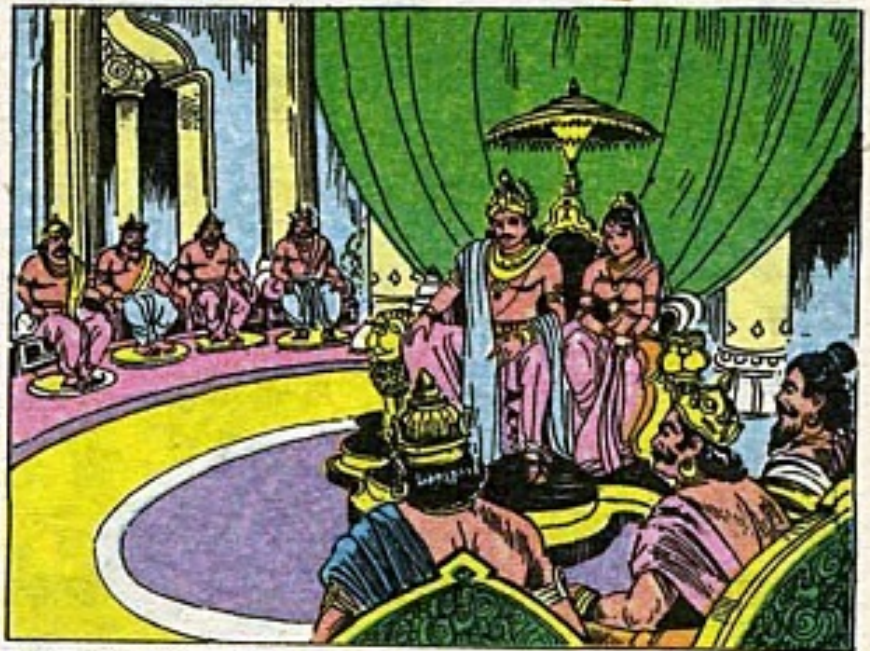
पिता के अतन्तर भरत राजा हो गए। एक सुयोग्य शासक के रूप में उन्होंने यश और कीर्ति प्राप्त की। देश के अन्य सभी राजाओं ने उनको अपने साम्राट के रूप में मान कर यथोचित आदर किया। कहा जाता है कि भरत के द्वारा शासित होने के कारण ही हमारे देश का नाम भारत पड़ा।

(समाप्त)

चतुर बूढ़ी

बहुत समय पहले की बात है—एक गाँव में सीताराम शास्त्रीय नाम का एक पंडित रहा करता था। वह गाँव के बच्चों को पढ़ाता, और उन से गुरु-दक्षिणा प्राप्त करता। उस ने पाँच सौ रुपये जमा कर लिये।

काशी में पंडितों की एक विचार-गोष्ठी आयोजित हुई। सीताराम शास्त्री को भी उस में निमंत्रित किया गया। सीताराम शास्त्री के सम्मुख एक समस्या थी कि बचत की रक़म को कैसे सुरक्षित रखा जाए? रक़म घर में रखने के संबंध में पत्नी ने सलाह दी—"देखो, धन बहुत बुरी चीज़ है। कुत्ते के समान मैं पहरा नहीं दे सकती। रात में चोर घर में घुस कर मेरे प्राण भी ले सकते हैं।"

इसी समस्या के हल के बारे में चिंतन करते हुए सीताराम शास्त्री सेठ दुर्गाप्रसाद की दुकान पर पहुँचा। दुर्गाप्रसाद के सामने अपनी समस्या रखते हुए रामशास्त्री ने सलाह माँगी—"दोस्त, बताओ, किस के पास रखने पर यह धन सुरक्षित रहेगा? मेरी तो कुछ समझ में नहीं आ रहा है।"

दुर्गाप्रसाद ने निःस्वार्थ भाव से उपदेश दिया—"मित्र, धन के मामले में ब्रह्मदेव पर भी विश्वास मत करो। लालच बुरी बला! धन पाप का मूल है!"

जब दोनों यों आपस में बातचीत कर रहे थे, तब दूकान के एक नौकर ने किसी औरत के हाथ घी तोल कर दिया। पैसा देकर वह चली गयी।

दुर्गाप्रसाद यह सब बारीकी से देख रहा था। एकदम नौकर पर बरस पड़ा—"क्यों बे! तुम ने उस औरत से चार पैसे ज्यादा क्यों वसूल किये? दरअसल हमको एक पैसा लाभ काफी है। तुम ने क्यों पाँच पैसे का लाभ वसूल किया? बार बार मैं ने तुम को समझाया, तुम्हारी अक्ल काम नही करती। याद रखो, आइंदा वह औरत सौदा करने

आएगी, तो चार पैसा उस को लौटा देना । समझे ?"

यह सुन कर दुर्गाप्रसाद पर सीताराम शास्त्री का विश्वास और हढ हो गया । दुर्गाप्रसाद की दूकान से आवश्यक सौदा कर के शास्त्री घर पहुँचा । अपनी पाँच सौ रुपये भरी थैली उठा ली और दुर्गाप्रसाद के पास आकर कहा "दुर्गाप्रसाद जी, यह मेरा धन है। काशी यात्रा से लौटने तक इसे अपने पास रख लीजिएगा? वापस आने पर मैं इसे ले जाऊँगा ।"

"अरे बाप रे, मैं पराये धन को छूता तक नहीं ! आप चाहें तो मेरे घर के किसी कोने में गड्ढा खोद कर अपना धन छिपा कर रख सकते हैं । काशी से लौटने पर खोद कर इसे ले जाइए ।" दुर्गाप्रसाद ने धन के प्रति अपनी अनासक्ति का प्रदर्शन किया ।

सीताराम शास्त्री ने अपने मन में सोचा 'वाह, दुर्गाप्रसादजी कैसे भले आदमी है ।' ऐसा विचार करते हुए शास्त्री ने अपना धन एक जगह पर छिपा कर रखा और अपने घर चला गया ।

इस के बाद सीताराम शास्त्री काशी के लिए रवाना हो गया । विचार-गोष्ठी में संमिलित होकर घर लौटने पर वह दुर्गाप्रसाद के घर गया और उसे प्रार्थना की —"दोस्त, मैं अपना धन वापस ले जाने के लिए आया हूँ । दे देंगे ?"

"ओह, क्यों नहीं? खुशी से ले जाना । आप ने जहाँ पर धन गाड़ रखा है, वह जगह आप को याद है न ?" दुर्गाप्रसाद ने पूछा ।

सीताराम शास्त्री ने जहाँ धन छिपाकर रखा था, उस जगह पर खोद कर देखा । आश्चर्य, वहाँ धन नहीं मिला । दुर्गाप्रसाद के पास आकर शास्त्री ने पूछा—"मित्रवर, धन तो दिखाई नहीं देता ! क्या बात है ?"

"शास्त्रीजी, मैं क्या जानूँ? धन जहाँ गाड़ा है, उस जगह का पता आप ही को है ।" दुर्गाप्रसाद ने झट कह दिया ।

शास्त्री ने समझ लिया कि उस के साथ धोखा हो गया है । बेचारा क्या करे, निराश हो अपने घर की ओर चल पड़ा ।

चलते चलते उसे रास्ते में गौरी देवी नाम की एक बूढ़ी मिली । शास्त्री को चिंतित देख बुढ़िया ने पूछा—"बेटा, काशी यात्रा कैसे रही ? उदास

मालूम होते हो, क्या बात है ?"

सीताराम शास्त्री ने बुढ़िया को सारा वृत्तान्त कह सुनाया। बुढ़ी कुछ देर तक सोचती रही, फिर कहने लगी—"बेटा, मैं दुर्गाप्रसाद से तुम्हारा सारा धन तुम्हें वापस दिलवाऊँगी। आओ, मैं जो कहूँ वैसा करो। चलो।" इतना कह कर बुढ़िया ने शास्त्री को एक युक्ति बताई। उस के अनुसार शास्त्री सब कुछ करने को तैयार हुआ।

इस घटना के थोड़ी देर बाद बूढ़ी दो हज़ार रूपयों के अपने ज़ेवर लेकर दुर्गाप्रसाद की दूकान पर पहुँची। उसने दुर्गाप्रसाद से निवेदन-किया—"बेटा, मेरा लड़का दस साल पहले पढ़ने के लिए काशी गया है। अभी तक उस का कुछ पता नहीं चला। मैं बूढ़ी चिंतित हो गई हूँ। मुझे खुद मालूम नहीं मैं कब राम कहूँगी। इसलिए मेरा इरादा है, एक बार काशी जाकर अपने पुत्र का पता लगाने की कोशिश करूँ। हूँ तो मैं अकेली! मेरे पास ये दो हज़ार रुपये मूल्य के गहने हैं। इन्हें मैं अपने साथ ले जाऊँ, तो डाकू मुझे रास्ते में लूट लेंगे। एक बार सीताराम शास्त्री ने मुझ से कहा था कि तुम बड़े धर्मात्मा हो। काशी की यात्रा पर जाते समय उसने अपना धन आप को सौंपा था। उसने तुम्हारे बारे में मुझे बताया था कि तुम परायी संपत्ति को माटी के समान मानते हो। इस लिए मैं तुम्हारे पास आई हूँ। बेटा, ये मेरे गहने कुछ दिनों के लिए अपने पास सुरक्षित रखो। इतना बुढ़िया माँ का काम करोगे ?"

बूढ़ी की ये बातें सुन कर दुर्गाप्रसाद ने मन में सोचा—'अच्छा मौका आ गया है हाथ में! क्यों

फायदा उठा न लूँ ? सीताराम शास्त्री का काशी से लौट आने का समाचार संभवः बूढ़ी को मालूम नहीं ।' उसने बुढ़िया से कहा—''माई, तुम अपने ही हाथों से तुम्हारे गहने जहाँ चाहो वहाँ गाड़ कर रख दो । अगर मैं कुछ तुम्हारे काम आ सका, तो मुझे संतोष ही है ।''

इसी समय अचानक सीताराम शास्त्री वहाँ पर आ धमका और उसने दुर्गाप्रसाद से कहा-—''देखिए सेठजी, मैं स्वयं भूल गया कि मैंने अपना धन कहाँ गाड़ रखा था । अब मुझे सही जगह याद आ रही है । वहाँ जाकर मैं अपना धन खोद निकालता हूँ ।''

यह बात सुन कर दुर्गाप्रसाद का कलेजा काँप उठा । उसने सोचा—'सीताराम शास्त्री के पाँच सौ रुपयों वाला किस्सा अगर बूढ़ी को मालूम हो गया, तो बूढ़ी अपने क़ीमती गहने इस घर में छिपाकर नहीं रखेगी ।' इस लिए दुर्गाप्रसाद ने शास्त्री से कहा—''दोस्त, तुम्हारे मन में जो शक हुआ, दरअसल मुझे भी वही हुआ । इस लिए मैंने दूसरी जगह खोद कर देखा । तुम्हारी थैली ज्यों-की-त्यों सुरक्षित मिल गई । दिखा दूँ ?'' ऐसा कहते हुए दुर्गाप्रसाद घर के भीतर चला गया और रुपयों की थैली लाकर सीताराम शास्त्री के हाथ सौंप दी ।

अपने उपाय को सफल होते देख चतुर बूढ़ी ने शास्त्री की ओर देखा और पूछने लगी—"अरे, तुम काशी से कब लौटे ? मुझे तो पता ही न चला । वहाँ पर तुम्हें कहीं मेरा बेटा दिखाई दिया क्या ?''

शास्त्री ने कहा—''माई, कल ही मैं काशी से लौटा हूँ । वहाँ मैं ने तुम्हारे बेटे को देखा । मुझे पहचान कर कह रहा था—'मैं दो-चार दिनों में गाँव आ रहा हूँ । मेरी माँ से कहना कि वह चिंता न करें ।' शीघ्र ही वह यहाँ आ जाएगा ।''

''बेटा, तुम ने मेरा बड़ा उपकार किया । अब तो मुझे काशी जाने की भी ज़रूरत नहीं रही ।'' कहते हुए बूढ़ी सीताराम शास्त्री के साथ दुर्गाप्रसाद के घर से चल पड़ी ।

दुर्गाप्रसाद को बूढ़ी की चतुराई समझते देर न लगी । वह दोनों की तरफ़ देखता ही रह गया।

उस साल मूसलाधार बारिश हुई। चारों तरफ़ हरी हरी घास लहलहाने लगी। हरी-भरी वसुंधरा पर जानवर खूब मज़े से घास चरने लगे। जानवर और उन के बछड़े खूब हट्टे-कट्टे बन गये। फसलें बहुत अच्छी आई। घास, लताएँ और पेड़-पौधे खूब उगे। गोकुल में धन-धान्य और गोरस विपुल मात्रा में उपलब्ध हुआ।

वर्षा ऋतु समाप्त हुई और शरद ऋतु का प्रारंभ हुआ। नन्द गोप और अन्य बुजुर्गों ने आपस में सलाह-मश्विरा किया और इन्द्रोत्सव मनाने का निर्णय किया। तुरन्त इन्द्रोत्सव की तैयारियाँ शुरू हुई। सब लोग इसी काम में व्यस्त दिखाई देने लगे। इन्द्रोत्सव से संबंधित कामों का आपस में बँटवारा किया गया। निवास-स्थानो को लीप-पोत कर साफ़-सुथरा बनाया गया। भिन्न भिन्न प्रकार की पूजा-सामग्री जुटाई गई। प्रसाद के रूप में बाँटने की मिठाइयाँ बनने लगीं। सर्वत्र आनन्द और उल्लास का वातावरण छा गया।

यह सब हंगामा देख कर श्रीकृष्ण ने हँसते हुए गोपकों से पूछा—"यह कैसा नया उत्साह आप लोगों में भर गया है? इन्द्रोत्सव का यह क्या पर्व है? किस अधिदेवता की पूजा-अर्चना करनी है? इस पूजा से आप लोगों का क्या कल्याण होने की आशा रखते हैं? इन्द्रोत्सव मनाने से क्या लाभ होनेवाला है?

एक बजुर्ग गोपक ने श्रीकृष्ण को समझाते हुए कहा—"बेटा, सारे लोकपालकों का राजा इन्द्र देव ही है न? वर्षा ऋतु के देवता भी इन्द्र ही हैं। इन्द्र के कारण ही वर्षा ऋतु में बादल जमा होकर

पृथ्वी पर अमृत-धारा बरसाते हैं। नदी-तालों में विपुल पानी बहने लगता है। ग्रीष्म की गरमी गायब हो सर्वत्र शीतलता का आभास होने लगता है। विपुल मात्रा से अनाज की अपलब्धि इन्द्र देवता के कारण होती है। अगर इन्द्र का कोप हुआ तो सारी समृद्धि से वंचित होना पड़े। गोगणों का उपकार करनेवाले इन्द्र देवता की आराधना गोपकों को अवश्य ही करनी चाहिए। इसी हेतु हम ने इन्द्रोत्सव मनाने की सोची है। समझ गये?"

यह निवेदन सुनकर श्रीकृष्ण ने अपनी बात सुनाई—"देखिए, मनुष्यों में प्रधानतः तीन पेशे हैं, खेती-बाड़ी, व्यापार-वाणिज्य और पशु-पालन। जो जिस पेशे को अपनाते हैं, उन का वही देवता है। हम लोग गोपालक हैं, वनों में रहते हैं और पहाड़ों में विचरण करते हैं। जानवरों का पालन करते हुए जीवन-यापन करते हैं। इस लिए हमारे लिए जंगल, पहाड़ और पशु ही देवता हैं। सब को अपने ही कुल-देवताओं की पूजा करनी चाहिए। किसान गाँवों में निवास करते हैं, जंगली लोग या आदिवासी जंगलों में रहते हैं। हम लोग पहाड़ों में निवास करते हैं। ब्राह्मण मंत्र-यज्ञ करते हैं, किसान हल का यज्ञ करते हैं, और गोपालक पहाड़ का यज्ञ करते हैं; इसलिए हमें पर्वतोत्सव करना चाहिए। जैसा मैं कहता हूँ, वैसा आप लोग नहीं करेंगे तो मैं ज़बरदस्ती आप से करवा दूँगा।"

"मैं यह सब गोकुल की भलाई के लिए ही कह रहा हूँ। ऋषि-मुनियों ने गिरि-यज्ञ की महिमा गायी है। हम पर्वतोत्सव का आयोजन करेंगे तो हमारा सब तरह से फायदा होगा। अतः मैं चाहता हूँ कि हम सब मिल कर बड़े पैमाने पर पर्वतोत्सव का आयोजन करें।"

श्रीकृष्ण ने इस प्रकार देर तक उनको समझाकर कहा, तब उन्हें ये सब बातें उचित मालूम हुई। इस के अलावा गोकुल की सारी जनता सब प्रकार से श्रीकृष्ण पर अवलंबित थी, क्योंकि और कोई उन का सहारा न था। श्रीकृष्ण ने जो अद्भुत कार्य किये थे, वे अपूर्व थे। मनुष्य मात्र के द्वारा वे कभी संभव न थे। साथ साथ श्रीकृष्ण ने कई बार उन को असाधारण आपत्तियों से बचाया था। उन की दृष्टि में वे मनुष्य ही नहीं,

देवता थे। श्रीकृष्ण की बात टालना किसी को संभव न था। श्रीकृष्ण का पर्वतोत्सव का प्रस्ताव सब को सर्वथा उचित लगा।

अतः गोपालकों ने इन्द्रोत्सव मनाने का अपना इरादा छोड़ दिया। उन्होंने ब्राह्मणों को निमंत्रित किया और गिरि-यज्ञ मनाने का प्रबंध किया। खीर, मोदक इत्यादि व्यंजन तैयार किये गये। अनेक प्रकार के अन्न, मांस, मधु, चटनियाँ, दही, घी और दूध जैसे पदार्थ बंगियों व गाड़ियों पर लादे गये। वाद्यों के साथ बाल-गोपाल वृद्ध गोपकों के पीछे जुलूस निकाल कर बड़े उत्साह के साथ गोवर्धन पर्वत की ओर चल पड़े।

गोवर्धन गिरि के पास एक अच्छी समतल भूमि को गोबर से लीपा-पोता गया। सुंदर रंगोलियों से उसे अलंकृत किया गया। एक ऊँचे आसन पर श्रीकृष्ण विराजमान हुए और उन के नेतृत्व में गिरि-पूजा संपन्न हुई। साथ में लाये गये खाद्य-पदार्थों को पर्वत के लिए भोग चढ़ाया गया। गोपालकों ने पुष्पांजलियाँ समर्पित करते हुए पर्वत को प्रणाम किया। जब सब लोग इस कार्य-कलाप में व्यस्त थे, तब पर्वत के अधिष्ठाता देवता के रूप में स्वयं श्रीकृष्ण पर्वत-शिखर पर अवतरित हुए। सब लोगों ने बड़े विस्मय के साथ उस दृश्य को देखा। श्रीकृष्ण ने हाथ फैला कर सारा नैवेद्य भक्षण किया। तब जाकर उन्होंने कहा—"आप लोगों की भक्ति देख मैं प्रसन्न हुआ।"

गोपालकों ने हाथ जोड़कर नम्र भाव से कहा—"हे देव, हम सब आप के दास हैं। आप की इच्छा हमारे लिए आज्ञा के समान है। आप जो आदेश दें, हम उस का पालन करेंगे"

"पर्वताकार रूप में ही आप लोग मुझे देवता माने और मेरी आराधना करें। इस से आप की सारी इच्छाएँ पूर्ण होंगी। आप के गोधन की वृद्धि होगी और गायों से अमृत-धाराएँ बहेंगी। मैं आप लोगों के बीच एक व्यक्ति बनकर रहा करूँगा।" इतना कहकर पर्वत-पर्व का देव अदृश्य हो गया।

गोपालकों ने पर्वत पर अधिष्ठित श्रीकृष्ण और पर्वत के नीचे विराजमान श्रीकृष्ण को एक ही समय देखा। इसके बाद उन्होंने अपने पशुओं के सींगों की पूजा की और उनके गलों में घुंघरू बाँधे। बेल-लताएँ लाकर उनके मुकुट बनाकर

उन्हें सजाया। ज़ोर ज़ोर से घोषणाएँ करते हुए उन्होंने पर्वत की चारों ओर परिक्रमा की और जहाँ-तहाँ नज़र उतारी। इस के बाद खाद्य-पदार्थ प्रसाद-स्वरूप स्वयं खा लिए। इस के बाद श्रीकृष्ण को बीच में रख कर सब ने नाचना-गाना शुरू किया। अलग अलग वाद्यों के ताल पर गोपाल नाच रहे थे और साथ साथ गा रहे थे। घण्टों तक यह आनन्द-पर्व चलता रहा। सभी आनन्द-सागर में मानो डूबे जा रहे थे। इस प्रकार पर्वतोत्सव समाप्त हुआ। फिर आनन्दोत्सव में सब लोग श्रीकृष्ण के साथ गोकुल लौट आए।

उधर स्वर्ग-लोक में इन्द्रर का अपमान हुआ और गोपालकों के प्रति उस का क्रोध उमड़ आया। उसने संर्वतम् आदि महा मेघों को बुलाकर उकसाया—"तुम लोग देख ही रहे हो, वृन्दावन के वासी सभी गोपक अहंकार के अधीन हो गये हैं। प्रति वर्ष जो मेरी पूजा करते थे, उसे बन्द कर के कपटी श्रीकृष्ण की बातों में आकर उन्होंने एक दुर्बल पर्वत की पूजा की है। शायद उन लोगों ने सोचा है कि इसी से उन को सब कुछ मिल जाएगा। तुम लोग लगातार सात दिन मूसलाधार बरस पड़ो और उनकी जीविका का आधार बनी गायों को हानि पहुँचा दो। मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। मैं भी तुम लोगों के साथ चलूँगा और सब तमाशा देखूँगा। देखूँ, तुम्हारा पराक्रम और शक्ति कैसी है!"

गोकुलवासियों को ईशान्य दिशा में बिजली की कौंध दिखाई दी। ज़ोर की हवा चली, भारी तूफ़ान उमड़ पड़ा। बच्चे चिल्लाने लगे, सर्वत्र बारिश ने हाहाकार मचा दिया।

पूरब में और बादल दिखाई दिए और बिजलियाँ कड़कने लगीं। वृद्ध गोपक विस्मय में आकर सोचने लगे आखिर यह बेमौसम की बरसात कैसी? अभी अभी हम ने उत्साह के साथ पर्वतोत्सव मनाया। अब यह कौन नई आपत्ति आने को है! लगता है, बड़ी भारी वर्षा होगी। आखिर हम ने क्या ग़लती की है?

देखते-देखते काल मेघ सारे आकाश में फैल गये और सूरज को ढँक लिया। सारा आकाश गहरे अंधकार से भर गया। कड़क-कड़क कर बिजलियाँ गिरने लगीं। इसके बाद ओले गिरे। अब क्या था, पृथ्वी व आकाश को जोड़ते हुए

करें? झोंपड़ियाँ गिर पड़ीं, गाडियाँ उलट गईं। अधिकतर पशु मर गये। रसोई बनाएँ तो कहाँ बनाएँ? दूध दुहना बंद हो गया। इस दुर्दशा की अवस्था में सभी गोपक श्रीकृष्ण के पास पहुँचे और प्रार्थना करने लगे—"हे कृष्ण, हम सभी अब तुम्हारी शरण में आ गये हैं। तुम्हीं हमारे एकमात्र सहायक हो। हमारी रक्षा करो। अब तक जब गोकुल पर संकट आए, तुम्हीं ने हमको उबारा। तुम्हारी शक्ति और सामर्थ्य अद्भुत है। अभी अति वृष्टि के कारण जो प्रलय मच रही है, उस से हमें बचाने की ताक़त केवल तुम्हीं में है।"

श्रीकृष्ण इन्द की दुर्बुद्धि समझ गये। प्रति वर्ष होनेवाले इंद्रोत्सव को रोक कर हम ने नया उत्सव मनाया, इस लिए उसे क्रोध आ गया। क्रोधवश गोकुल पर वह प्रतिशोध ले रहा है। इन्द्र को विश्वास है कि ऐसा करने पर कृष्ण विवश हो जाएँगे। इन सब बातों का विचार कर श्रीकृष्ण ने निश्चय किया कि गोवर्धन पर्वत को आकाश में उठा कर उस के नीचे गोपकों तथा गायों की सुरक्षा का प्रबंध करना चाहिए।

दूसरे ही क्षण श्रीकृष्ण ने बड़ी सरलता से गोवर्धन पर्वत को उखाड़ लिया और अपने हाथ से छतरी की भाँति उसे थाम लिया। श्रीकृष्ण ने जिस समय गोवर्धन को उखाड़ा, तब बड़े बड़े पत्थर भारी आवाज़ के साथ नीचे लुढ़क आये। विशाल वृक्ष उखड़कर धराशायी हो गये। गुफ़ाओं में छिपे हींस्र श्वापद और बिलों में वास

कुंभ वृष्टि होने लगी।

उस वर्षा को देख गोपक भयभीत हो गये। उन को लगा, मानो प्रलय प्रारंभ हो गयी है। उन की समझ में नहीं आया कि इस प्रचंड वर्षा से लोग अपने को कैसे बचाएँ और अपने प्राणों की सुरक्षा कैसे करें। भागे तो कहाँ भागे? पशुओं की दशा इस से भी बदतर हो गई। पेड़-पौधे धराशायी हो गये। बिजलियों के गिरने से कुछ पेड़ जल गये। आँधी में कुछ पेड़ उड़ गये, तो कुछ और वृक्ष बाढ़ में बह गये। आँधी और वर्षा ने मिलकर जंगल की प्राकृतिक सुंदरता को ध्वस्त कर दिया। बहुत अधिक संख्या में पक्षी मर गये।

मनुष्यों पर जो गुज़री, उसका वर्णन कैसे

करनेवाले साँप बाहर निकल आये। उन पर रहनेवाले विद्याधर भागने लगे। तपस्या करनेवाले मुनियों की तपस्या भंग हो गई।

श्रीकृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को उठाकर गोपकों से कहा—"आप लोग अपने सारे पशुओं को लेकर इस पर्वत के नीचे आ जाइए। तब वर्षा आप का कुछ नहीं कर सकती।" कृष्ण की पुकार सुनकर सभी गोपक अपना सामान, गाड़ियाँ, औरतों-बच्चों तथा गायों को लेकर पर्वत के नीचे आ पहुँचे।

सात दिन लगातार कुंभ-वृष्टि कराने के बाद इन्द्र ने मेघों को वापस बुलाया। फिर आकाश निरभ्र और स्वच्छ हो गया। गोवर्धन पर्वत के नीचे से सारा गोकुल बाहर आ गया। फिर श्रीकृष्ण ने गोर्वधन को अपने स्थान पर रख दिया। और तब वे पर्वत पर बैठ कर चारों तरफ़ चरनेवाले गायों की ओर प्रेमभरी दृष्टि से देखते रह गये।

श्रीकृष्ण के द्वारा किया गया यह अद्भुत कार्य देख कर इन्द्र अविचलित हो अपने स्थान पर बैठे न रह सके। मन-ही-मन घबड़ा गये। इन्द्र कुछ अन्य देवताओं के साथ ऐरावत पर सवार हो पृथ्वी पर उतर पड़े। उन के हाथ में वज्रायुध भी था। गोवर्धन पर्वत पर जहाँ श्रीकृष्ण बैठे थे, वहीं इन्द्र पहुँचे। ऐरावत से नीचे उतरकर इन्द्र ने श्रीकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीकृष्ण ने ऐसा नाटक किया जैसे इन्द्र को देखा ही न हो। मौन बैठे रहे। इन्द्र ने समझ लिया कि श्रीकृष्ण उस पर नाराज़ हैं। तब उन्होंने स्तुति पाठ किया। उन्होंने श्रीकृष्ण को बताया कि वे ठीक समझ नहीं पाये कि गोपाल रूप में श्रीकृष्ण सर्वेश्वर का एक रूप है। अहंकारवश उन्होंने भगवान के प्रति अपकार किया। इन्द्र ने श्रीकृष्ण से क्षमा माँगी। इस के बाद इन्द्र ने गोपति के रूप में श्रीकृष्ण का अभिषेक कराया और उन्हें दिव्य वस्त्राभूषण समर्पण किये।
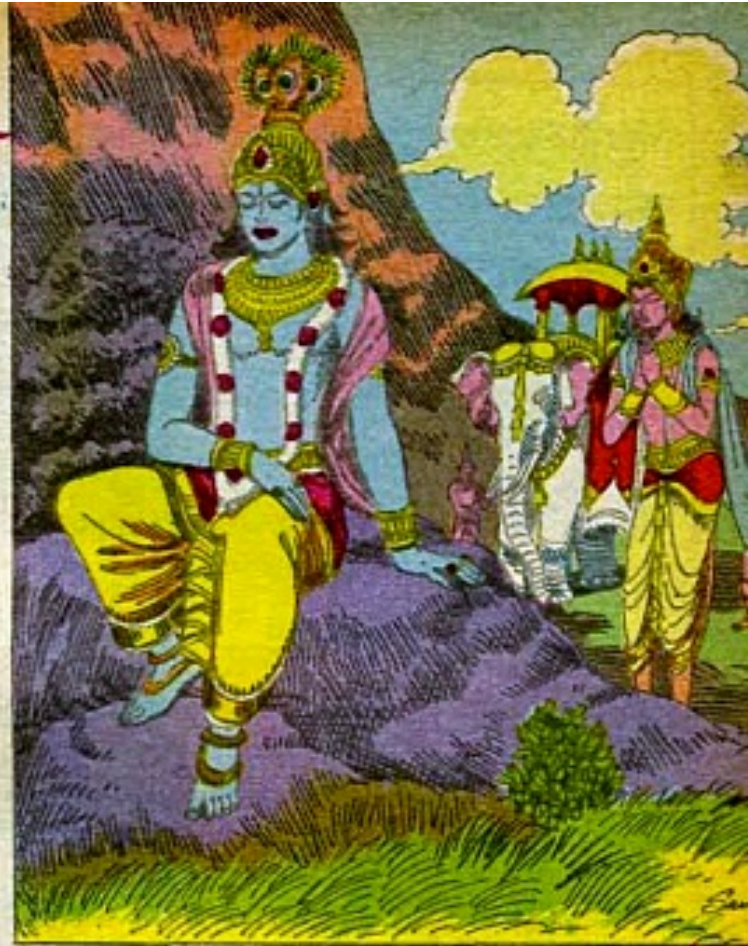
अंत में इन्द्र ने श्रीकृष्ण से निवेदन किया—"हे श्रीकृष्ण, कंस के अधीन रहनेवाले कई राक्षस आप को हानि पहुँचाना चाहते हैं। अन्त में ये सब आप के हाथ मारे जाएँगे। आप कंस का वध करके अन्त में राजा बन जायेंगे। आप की फूफी कुंती के गर्भ से युधिष्ठिर और

भीमसेन का जन्म होगा। तब मेरे द्वारा अर्जुन का उद्भव होगा। वह आप का भक्त बनकर आप का आश्रय चाहेगा। आप उस को आश्रय देकर उसकी उन्नति का हमेशा ख्याल रखिए। उस के यश का कारण बन जाइए। भविष्य में कौरव और पांडवों का युद्ध होगा। उस युद्ध में कई राजा भाग लेंगे। मैं चाहता हूँ, उस में अर्जुन की विजय हो।"

श्रीकृष्ण ने इन्द्र को आश्वासन दिया—"मेरी फूफी के पाँचों पुत्र महान् पराक्रमी हैं। सब में परमात्मा आ अंश है। एक समय आएगा वे सब सारी पृथ्वी के शासक बन जायेंगे। उनमें से एक अर्जुन बड़ा ही शूर और पराक्रमी है। मैं पहले से ही ये सारी बातें जानता हूँ। आप ने जो कुछ कहा, मैं सब कुछ अवश्य करूँगा। आपके आने से मुझे परम संतोष हुआ। अब आप निश्चिन्त होकर स्वर्ग-लोक जा सकते हैं।"

इसके बाद इन्द्र ने श्रीकृष्ण के चरणों में साष्टांग प्रणाम किया, और उन की परिक्रमा की। फिर ऐरावत पर सवार हो अन्य देवताओं के साथ प्रसन्नतापूर्वक अपने लोक चले गये। इधर श्रीकृष्ण गोवर्धन पर्वत से उतर कर गोकुल चले गये।

सभी गोपकों ने उनको चारों तरफ़ घेर लिया। गोकुलवासी समझ गये कि श्रीकृष्ण सामान्य मानव नहीं है। ये एक असाधारण मानव हैं। उन्होंने श्रीकृष्ण से पूछा—"इस समय प्रच्छन्न रूप में हमारे बीच रहनेवाले आप वास्तव में कौन है? गोकुल पर कितनी बार आपत्तियों के पहाड़ टूट पड़े। आप ने हर बार बहादुरी से हम सब की रक्षा की। आप की शक्ति अतुलनीय है। आप न होते, तो जाने हमारी क्या दुर्दशा होती। आप तीनों लोकों के रक्षक हैं। तो यहाँ पर गायें क्यों चराते हैं? आप को देख कर कभी कभी डर लगता है।"

श्रीकृष्ण ने मुस्करा कर कहा—"मैं तो आप के समान एक मानव हूँ। क्यों ये सारे प्रश्न कर रहे हो?"

इस पर सब गोपक अत्यन्त हर्षित हो उठे।

ईमानदारी

जगन्नाथ और उमापति साठ वर्ष के थे। एक बार वे दोनों यात्रा करने निकले। रामनगर की सीमा पार करते ही तूफ़ान के साथ बारिश भी शुरू हुयी। कहीं आश्रय लेने के विचार से वे दोनों तेज़ चलकर समीप के एक भग्न मंदिर में पहुँचे। वहाँ पहले से ही एक युवती आँसू पोंछते उदास बैठी थी।

बुज़ुर्गों ने उस युवती को एकाकी देख विस्मय में आकर पूछा, "लगता है, आँधी आनेवाली है। तुम अकेली यहाँ कैसे फँस गयी हो बेटी?"

प्रश्न का उत्तर देने में युवती थोड़ी देर सकुचाती रही, फिर बोली, "मैं जीवन से ही ऊब गयी हूँ। आत्महत्या करने के विचार से रनिवास से निकली और यहाँ तूफ़ान में फँस गयी हूँ। मेरी किस्मत का फेर है। अब ज़िन्दा रहने का भी कोई मतलब नहीं। आप लोग मेरी क्या मदद कर सकते हैं? जब भगवान ने कुछ नहीं किया तो आप भला क्या करेंगे?" उत्तर देते देते वह रो पड़ी।

यह सुनकर जगन्नाथ और उमापति और ही आश्चर्य में आ गये। जगन्नाथ ने उसकी ओर बड़ी सहानुभूति से देखते हुए पूछा, "बेटी, रनिवास में रहने वाली तुम जैसी लड़की के मन में आत्महत्या का विचार क्यों जागा?"

युवती थोड़ी देर सिर झुकाकर मौन बैठी रही और फिर बोली, "आज मैंने रानी और राजा को मेरे विवाह के बारे में वार्तालाप करते सुना। हमारी ज़मीनदारी का कामकाज देखनेवाले शिवानन्द नाम के नौकर के पुत्र के साथ मेरा विवाह कर देना चाहते हैं। मैंने एकान्त में राजा से भेंट करके उन्हें यह बताया कि यह विवाह मुझे कतई पसन्द नहीं। जानते हैं राजा ने इसका क्या उत्तर दिया? —तुम पर अपने नौकर शिवानन्द का बड़ा ऋण है, यह बात शायद तुम नहीं जानती हो। उसके पुत्र के साथ विवाह करके तुम्हें उऋण होना चाहिए।—मैं ज़मीनदार की पुत्री होकर अपने ही नौकर के लड़के के साथ विवाह क्यों

अर्चना सोमाणी

करूँ? वैसे वह लड़का कुछ अच्छा भी नहीं है। उस के साथ विवाह करना, सर्वनाश को निमंत्रण है। उस से बहुत अच्छा लड़का मुझे मिल सकता है। अपने अनुरूप वर को ढूँढ़ सुखी बनने का मेरा इरादा था। मगर राजा मानेंगे नहीं, इसलिए मैं आत्महत्या करना चाहती हूँ।''

युवती की सारी बातें सुनकर जगन्नाथ उतावली से पूछ बैठा,''क्या तुम ज़मीन्दार श्यामराय भूपति की बेटी प्रमिला हो? अरेरे, तुम्हारा वध करने के लिये सब प्रकार के प्रयत्न करके आखिर असफल हो कारागार के शिकार बननेवाले दो पापी हम ही हैं, बेटी! हम आज ही कारागार से रिहा हुए। जब मैं कारागार में था, तब अपने पापों के बोझ तले दबकर मेरी पत्नी भद्रावती घुल-घुलकर मर गयी। हमें अपने किये पर बहुत पछतावा हुआ। कारागार से छूटने पर किसी प्रकार थोड़ा-बहुत पुण्य-संचय करके अपने पापों का प्रायश्चित्त करने के ख़याल से ही हम दोनों अपने गाँव की ओर निकल पड़े हैं, बेटी।''

''अगर उस दिन वही शिवानन्द हम को नहीं रोकता तो हम तुम्हारी हत्या के पाप के भागी हो जाते।'' उमापति ने व्यथित स्वर में कहा।

''मेरी समझ में नहीं आता कि राजा के जैसे ही तुम लोग भी उस शिवानन्द की तारीफ़ के पुल क्यों बाँध रहे हो?'' प्रमिला ने पूछा।

इसके उत्तर में जगन्नाथ बोला, ''सुनो बेटी, एक बार ज़मीन्दार श्यामराय भूपति किसी भयंकर बीमारी का शिकार हो गया। वैद्यों ने भरसक प्रयत्न किये, मगर प्राणों का ख़तरा बना ही रहा। उनकी पत्नी का भी देहावसान बहुत पहले ही हो चुका था। उस हालत में ज़मीन्दार का अपने किसी रिश्तेदार पर भी विश्वास नहीं था। उन्होंने अपने दीवान उमापति तथा मित्र जगन्नाथ को अपनी छः वर्ष की लड़की प्रमिला के अभिभावक के रूप में नियुक्त किया। प्रमिला से 'सज्ञान' होने तक उसकी ज़मीन-जायदाद की रक्षा करने की ज़िम्मेदारी भी उन्हीं की थी। इस घटना के कुछ दिन बाद ज़मीन्दार का देहान्त हो गया।

ज़मीन्दार की मृत्यु के बाद एक सप्ताह के अंदर ही जगन्नाथ अपनी पत्नी भद्रावति को लेकर ज़मीन्दार के घर आ धमका और वहीं उसने

अपनी गृहस्थी बसायी। इसके बाद छोटी प्रमिला को वह नाना प्रकार से यातनाएँ देने लगा। इसके साथ उस दम्पति ने एक ऐसी योजना बनायी कि उस उपाय से प्रमिला सहजमृत्यु का शिकार बन जाए और कोई शंका भी न करें। बाद में सारी ज़मीन्दारी पर अपना ही कब्जा करें ।

उनकी इस दुष्ट योजना को भाँपकर नौकर शिवानन्द प्रमिलाकी आँख की पुतली की भाँति रक्षा करने लगा। वह उस की हर बात का ख्याल रखता। वह देखता कि दोनों समय उस को खाना मिलता है। अगर वह बीमार हो गयी तो वह उस की दवा-दारू करता। अपनी पुत्री की भाँति वह उस से प्यार करता। इस बीच श्यामराय भूपति के प्रति अत्यंत सहानुभूति व स्नेह रखनेवाले उस देश के राजा अपने श्रीवर्धन राज्य का भ्रमण करते करते श्यामराय भूपति के गाँव आये ।

उस समय ठीक खान-पान से अभाव में प्रमिला अत्यन्त कमज़ोर हो गयी थी। राजा के आगमन का समाचार सुनकर भद्रावती ने प्रमिला को नहलाया-धुलाया, उसे रेशमी वस्त्र पहनाये और बढ़िया दावत का इन्तज़ाम किया ।

राजा प्रमिला को देखने आये और उससे पूछा, "बेटी, कुशल हो न? तुम्हारे पिता ने जिन अभिभावकों को नियुक्त किया है, वे क्या अच्छी तरह तुम्हारी देखभाल करते हैं ? अगर तुम को कुछ शिकायत हो तो हम से बेहिचक कहो।"

उस वक्त पास ही एक झीने पर्दे के पीछे खड़ी भद्रावती प्रमिला को आँखों से कुछ संकेत कर

रही थी। फिर निड़र होकर प्रमिला ने सीधे कहा, "आप जैसे लोग जिस दिन मुझे देखने आते हैं, उसी दिन मुझे बढ़िया खाना-पीना मिलता है, अच्छे कपड़े पहनाये जाते हैं। बाकी दिनों में मेरा कोई ख़याल तक नहीं करते ।"

फिर क्या था, राजा प्रमिला के संरक्षकों पर नाराज़ हुए और उन्हें डाँटकर, चेतावनी देकर चले गये ।

उस रात को भद्रावती ने प्रमिला को गोदाम में रखकर, दरवाज़े बंद कर वहाँ मिर्च का धुआँ किया। सुबह शिवानन्द ने देखा—प्रमिला बेहोश पड़ी है—बड़ी दौड़धूप करके किसी प्रकार वह प्रमिला को होश में लाया ।

दो दिन बाद जगन्नाथ ने शिवानन्द को

बुलाकर कहा,"सुनो शिवानन्द, इधर कुछ दिन से प्रमिला की तबीयत ठीक नहीं है, कल वैद्य आकर प्रमिला को देखकर गया है और दवा के लिये आज तुमको भेजने के लिये कहा है। तुम जाकर दवा ले आओ।"

शिवानन्द ने जाकर वैद्य के हाथों से दवा की गोलियाँ लीं, लेकिन उस के मन में दवा के प्रति शंका थी। इसलिये उस ने दवा की गोलियाँ कहीं फ़ेंक दी और बदले में शक्कर की गोलियाँ शीशी में भरकर घर ले आया। एक सप्ताह तक गोलियाँ खिलाने पर भी प्रमिला पर उसका कोई असर न पड़ा, उसे किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँची। इसपर सब षड्यन्त्रकारी आश्चर्य में आ गये।

इस के बाद वे एक ओझा को ले आये। रंगोलियाँ खींचकर उन के बीच प्रमिला को बिठाया गया और ओझा मंत्र-पाठन करने लगे। शिवानन्द ने पहचान लिया कि यह सब क्रियाएँ लड़की को हानि पहुँचाने के लिये ही की जा रही हैं। फिर क्या था, उसी दिन अर्धरात्री के समय शिवानन्द प्रमिला को कंधे पर उठाकर पड़ोस-ग्राम में उसके रिश्तेदार के घर छोड़ आया, और ज़मीन्दार के घर लौटकर ऐसे सो गया, मानों वह कुछ जानता ही नहीं हो।

सबेरा होते ही प्रमिला के ग़ायब होने का समाचार आग की तरह गाँव भर में फैल गया। ज़मीन्दार के बाकी नौकर ही नहीं, बल्कि गाँव के सारे लोग जगन्नाथ व उमापति पर शक करने लगे। मृत ज़मीन्दार के प्रति ग्रामवासी लोगों के मन में गहरी श्रद्धा थी। इस कारण दस दिन बाद भी जब प्रमिला का कोई अतापता नहीं चला, तब लोगों ने राजा से इस बात की शिकायत की।

जगन्नाथ, उमापति कौर भद्रावती की सुनवाई करके राजा ने उनको कारावास की सज़ा दी।

थोड़े दिन बीतने के बाद शिवानन्द ने प्रमिला को ले जाकर राजा के हाथ सौंप दिया और निवेदन किया—"प्रभु, संपत्ति के प्रलोभन में पड़कर इस छोटी सी बालिका के लिये थोड़ी भी सहानुभूति न रखकर उन दुष्टों ने इस की हत्या करनी चाही। इसलिए इसकी रक्षा के हेतु मैं ने इसे गुप्त रूप से छिपाये रखा। यदि मेरा यह कार्य अपराध है, तो

मुझे ज़रूर दण्ड दीजिए ।"

शिवानन्द से सारा समाचार जानकर राजा ने कहा," शिवानन्द तुमने इतना जो उपकार किया, तो इस की रक्षा का भार अब तुम अपने ही ज़िम्मे लो न ।"

मगर शिवानन्द ने राजा की बात नहीं मानी। वह बोला,"धन के लालची लोगों के कारण प्रमिला के चारों ओर ख़तरे ताक लगाये हुए हैं। यह बच्ची आप ही की देखरेख में सुरक्षित रहेगी ।"

उस दिन से प्रमिला राजा के संरक्षण में पलने लगी। राजा ने ज़मीनदारी के काम-काज संबंधी सारी ज़िम्मेदारी शिवानन्द को सौंप दी। वह बड़ी ईमानदारी से जायदाद की देखरेख करते हुए पैदावार व लगान की वसूली से प्राप्त होनेवाली आमदनी राजा को सौंपने लगा ।

अब जगन्नाथ के मुँह से सारी हक़ीक़त सुनकर प्रमिला की आँखों से आँसू झरने लगे। वह बोली,"मैं ने सच्ची बात समझने का प्रयत्न किये बिना ही शिवानन्द-नाना की अवहेलना की है। न मालूम मेरे इस अपराध को भगवान भी क्षमा करेंगे या नहीं ।"

इसपर उमापति व जगन्नाथ ने उसको समझाया, सांत्वना दी और पूछा, "बेटी, बताओ अब तुम्हारा क्या निश्चय है?"

"तुम में से कोई एक मेरे साथ हमारी ज़मीन्दारी के गाँव चलें और दूसरा जाकर राजा को मेरे कुशल-मंगल का समाचार दे दें। राजा को बता दें कि मैं शिवानन्द के लड़के से विवाह करना स्वीकार करती हूँ। राजा का प्रस्ताव योग्य ही था, मैं उसे ठीक समझ नहीं पाई। इसके बाद शिवानन्द के पुत्र के साथ मेरा जब विवाह होगा तब उस समारोह में पधार कर मुझे आशीर्वाद दीजिए, मुझे हार्दिक प्रसन्नता होगी ।" प्रमिला ने कहा ।

उस समय तक वर्षा पूर्ण रूप से थम चुकी थी। उमापति प्रमिला के साथ ज़मीन्दार के गाँव की ओर चल पड़ा और जगन्नाथ पुनः रामनगर की ओर लौट पड़ा ।

सौदामिनी की कहानी

चन्दन देश के राजा अनंगवर्मा थे। उनकी इकलौती बेटी का नाम था सौदामिनी। सौदामिनी जब तीन ही साल की बालिका थी तब उसकी माँ स्वर्ग सिधार गयी। फिर भी अनंगवर्मा ने दूसरी शादी नहीं की। उन्होंने माँ और पिता दोनों की भूमिका लेकर लड़की का लालन-पालन किया। अनंगवर्मा सौदामिनी से खूब प्यार करते। उन्हों ने उस को पढ़ाया-लिखाया। सौदामिनी को अनेक कलाओं में रुचि थी। अनंगवर्मा हर बात में बढ़ावा देकर उस की प्रगति में सहायता करते। सौदामिनी पाक-कला में निपुण हो गयी। तरह तरह के स्वादिष्ट व्यंजन बनाकर वह अपने पिता को खिलाती। अनंगवर्मा उस की भूरि भूरि प्रशंसा करते।

सौदामिनी विवाह योग्य उमर की होते होते अनुपम रूपवती और बुद्धिमती बन गयी।

एक दिन अनंगवर्मा अपनी कन्या से बोले, "बेटी, मैं शीघ्र ही तुम्हारा विवाह कर देना चाहता हूँ। लो, देखो; ये अनेक देशों के राजकुमारों के चित्र हैं, और इन ताड़पत्रों में उनके वर्णन और उनकी सारी जानकारी लिखी हुई है। अच्छी तरह से सोच विचार कर अपने लिये योग्य वर का चुनाव करो। तुम को विदित ही है कि वह केवल तुम्हारा पति ही नहीं, बल्कि साथ-साथ इस देश का भावी राजा भी बनेगा।" यह कहकर राजा ने कुछ चित्र और ताड़पत्र सौदामिनी के हाथ सौंपे।

सौदामिनी ने चित्रों की ओर नज़र भी न डालते हुए उनको व ताड़पत्रों को अलग रखा और वह कुछ क्षण गहरे विचार में डूब गयी। इसके बाद उसने अपने पिता से कहा, "पिताजी, मेरे भावी पति के रूप-सौन्दर्य, शौर्य एवं पराक्रम के बारे में कुछ तर्क-वितर्क करने की आवश्यकता नहीं है। इस संबंध में आप ही ठीक विचार करेंगे। लेकिन मैं अपने होनेवाले पति के गुण-विशेषों की परीक्षा करना चाहूँगी। उसमें जो सफल होगा, उसी युवक के साथ मैं

लक्ष्मी रॉय

विवाह करूँगी। मेरे विचार में चरित्र से बढ़कर दूसरा कोई भी सद्‌गुण या सौन्दर्य नहीं है। मैं चाहती हूँ मेरा पति सच्छील और चरित्र-संपन्न हो। और बातों में कुछ कमी रही तो मुझे उस की परवा नहीं। मैं मानती हूँ मेरे इस विचार से आप भी सहमत होंगे।"

अपनी कन्या के निर्णय पर प्रसन्न होकर राजा अनंगवर्मा ने पूछा,"बोलो बेटी, कैसी परीक्षा होगी तुम्हारी? ख्याल तो तुम्हारा बिलकुल ठीक है। पर किसी के चरित्र की ठीक ठीक परीक्षा करना सहज काम नहीं। थोड़ी-सी बातचीत करके चरित्र को परखना संभव नहीं। तुम कैसे किसी के चरित्र को जानोगी?"

"पिताजी, पहले मैं आपको एक कहानी सुनाऊँगी। आप विवाह के परीक्षार्थी को वही कहानी सुनाइये। उसमें जो समस्या निहित है, उसका हल बतानेवाला विजेता ही मेरा पति बन जाएगा।" यह कहकर सौदामिनी अपने पिता को कहानी सुनाने लगी।—

प्राचीन काल में वत्सल देश में चक्रसेन नाम का राजा राज्य करता था। उसकी पुत्री का नाम था—कनकप्रभा। वह अनुपम सौन्दर्यवती थी।

एक बार वत्सल देश के मित्र-देश कौण्डिण्य का राजा विश्वम्भर देश के किसी उत्सव में भाग लेने अपने मित्र चक्रसेन के पास आया हुआ था।

उस समय चक्रसेन के विश्राम-गृह में टँगे चित्रों को देखते देखते विश्वम्भर एक रमणी का चित्र देखते ही रह गये। वैसे दीवारों पर एक से

एक बढ़िया बहुतेरे चित्र लगे थे। पर विश्वम्भर को इसी एक चित्र में भारी दिलचस्पी हुई। देर तक वह उस चित्र को देखते रहे। चक्रसेन को थोड़ा कुतूहल हुआ, थोड़ा आश्चर्य!

इसे भांप कर चक्रसेन ने कहा,"चित्र में अंकित सुंदरी सौंदर्य में अप्सराओं को मात कर रही है न? मैं भी इस चित्र को बहुत पसंद करता हूँ।"

चक्रसेन के ये शब्द सुनकर मंदहास करते हुए विश्वम्भर बोले,"मैं इस चित्र की रमणी का सौन्दर्य नहीं देख रहा हूँ। चित्र को देख, न मालूम क्यों, मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यह चित्र बाएँ हाथ से खींचा गया है।"

मित्र के कथन पर आकर चक्रसेन बोले,

"नहीं नहीं ! इस चित्र को अंकित करनेवाला चित्रकार माधुर नाम का है और उसे यह चित्र दाहिने हाथ से ही खींचते हुए मैंने खुद देखा है। तुम ज़रूर कोई भूल कर रहे हो।"

"हो सकता है, उसने तुम्हारे सामने दायें हाथ से चित्र खींचा हो मगर वास्तव में यह चित्र बायें हाथ से ही बना है।" विश्वम्भर ने अपनी बात को ही ठीक बताते हुए कहा।

चक्रसेन ज़रा गुस्से में आकर बोला, "ठीक है। मैं अभी माधुर को बुलवा लेता हूँ-हम उसीसे पूछेंगे। यदि आप की बात सच निकली तो अपनी कन्या कनकप्रभा का विवाह तुम्हारे पुत्र के साथ कर दूँगा।"

इसके उत्तर में विश्वम्भर ने सिर हिलाकर कहा, "तुम्हारी शर्त प्रशंसनीय है। लेकिन यदि मैं हार जाऊँगा तो अपने जीवन पर्यंत तुम्हारे देश की विकास योजनाओं को अमल में लाने के लिये हर साल मैं पचास हज़ार सुवर्णमुद्राएँ अनुदान के रूप में भेजता रहूँगा। ठीक?"

चक्रसेन ने माधुर को बुला भेजा। एक घंटे के अन्दर ही माधुर उन दोनों के सामने उपस्थित हुआ। राजा के मुँह से प्रश्‍न सुनकर पहले तो वह घबराया। मगर बाद में उसने यह बात कबूल की, कि उसने चित्र बाएँ हाथ से ही खींचा था।

चक्रसेन पहले तो ज़रा विचलित हुआ, फिर सम्हालकर उसने माधुर को भेज दिया। और बाद में उसने विश्वम्भर से कहा, "मैं भले ही पराजित हुआ हूँ, पर इसमें भी मेरा फायदा ही है। हमारी मित्रता अब रिश्‍ते में परिवर्तित होगी। मैं महारानी तथा कनकप्रभा को यह समाचार सुनाकर यथाशीघ्र मुहूर्त निश्चित करूँगा।"

विश्वम्भर ने प्रसन्नतापूर्वक इस बातको स्वीकार किया।

उसी दिन संध्या के समय राजकुमारी कनकप्रभा की माँ, महारानी इन्दुमतीदेवी अपनी कुलदेवी स्वयंप्रभादेवी के मंदिर में पूजा करके लौट रही थीं। तब चार डाकुओं ने महारानी की पालकी ढोनेवाले चारों कहारों पर हमला कर के उनको रोका। कहारों ने उनका सामना करने की भरसक कोशिश की और डाकुओं के हाथों घायल हुए। डाकुओं से घबराकर राजपथ पर चलनेवाली प्रजा भी तितर-बितर हो गयी।

अब चारों डाकू महारानी के समीप पहुँच ही रही थे, कि अचानक एक युवक बिजली की भाँति उनके बीच कूदकर उनपर टूट पड़ा। उसकी तलवार के वार से घबराकर चारों डाकू भाग खड़े हुए। राजभटों ने उनका पीछा किया और उन को बन्दी बनाया ।

महारानी इन्दुमतीदेवी ने युवक से पूछा, ''बेटा, तुम कौन हो? अपना नाम-धाम बतला दो ।''

युवक ने विनयपूर्वक कहा, ''माताजी, मेरा नाम राजशेखर है। मैं महासेनापति त्रिविक्रमवर्मा का रिश्तेदार हूँ ।

युवक के उत्तर पर प्रसन्न होकर महारानी ने फिर पूछा, ''ओह! महासेनापति से पुत्रवत् पाला जानेवाला उनका भानजा तुम्हीं हो?''

राजशेखर ने स्वीकृतिसूचक सिर हिलाया ।

''मैंने सुना है कि तुम काशी में विद्याभ्यास कर रहे हो। क्या तुम्हारी शिक्षा समाप्त हुई ?'' रानी ने पूछा ।

''महारानी, एक महीने पूर्व ही मैं शिक्षा समाप्त कर लौटा हूँ ।'' राजशेखर ने कहा ।

''बड़ी खुशी की बात है। बेटे, तुमने मेरी रक्षा की है, इसलिए मैं तुम्हारी ऋणी बन गयी हूँ। तुम्हारा यह ऋण चुकाने के लिए, मैं अपने पास जो अमूल्य सुर्वण है, वह तुमको दे दूँगी।'' यह कह कर महारानी पालकी में सवार होकर चली गयीं ।

राजशेखर ने माना की, महारानी ने बिना स्पष्ट कहे ही इस बातका संकेत किया है कि, वह राजशेखर को अपना जमाई बनाएगी और उसका
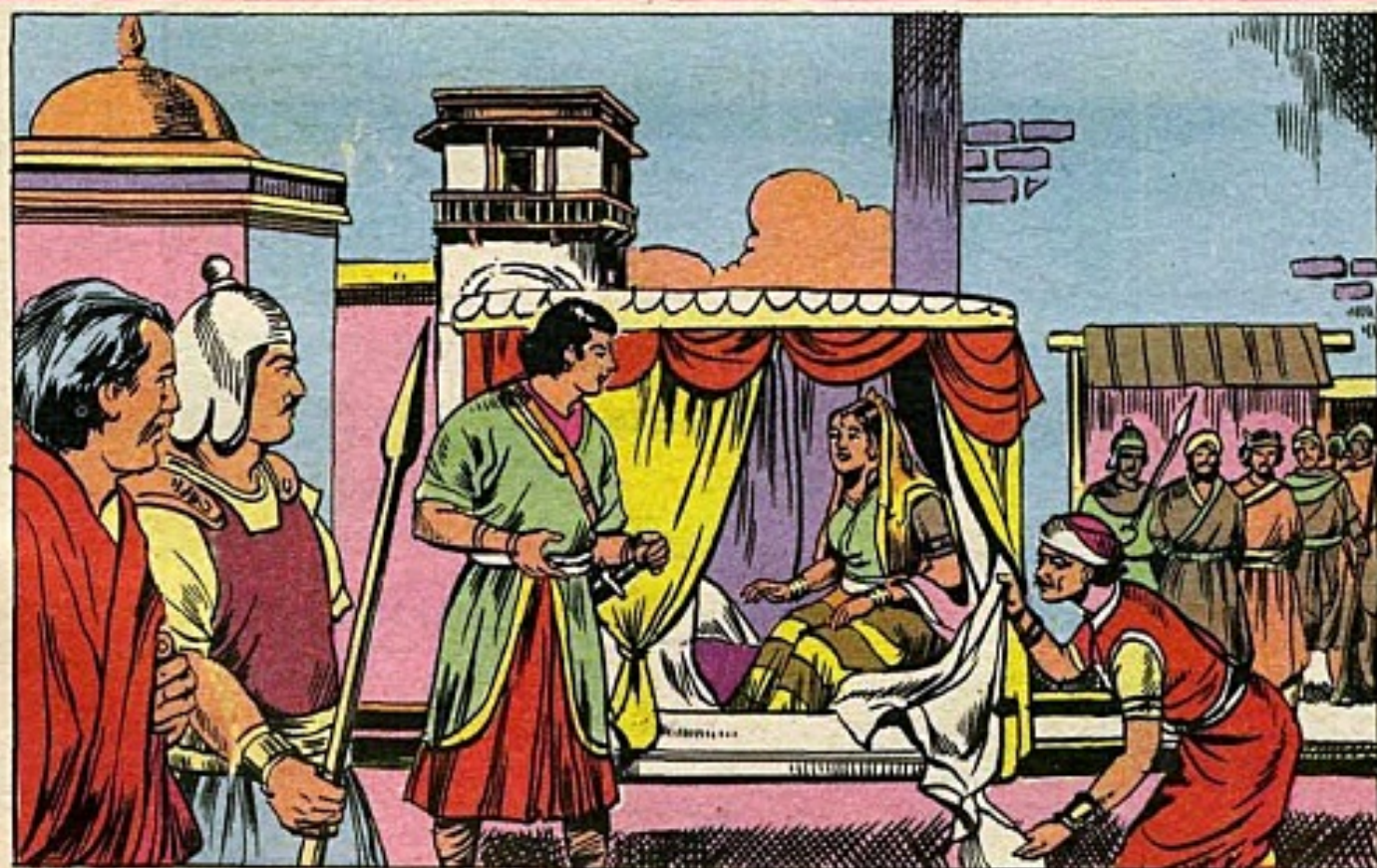
मन बल्लियों उछलने लगा ।

युवराज्ञी कनकप्रभा के विवाह के बारे में इधर उसके मातापिता के इस प्रकार अलग अलग विचार थे, तो उधर उसी शाम को खुद कनकप्रभा के साथ और एक घटना घटी । शामको कनकप्रभा अपनी सखियों के साथ उद्यान में विहार करने गयी । हँसते-खेलते, बातें करते अपनी सखियों के आग्रह करने पर राजकुमारी कोई गीत गाते एक ओर की झाड़ियों में चली गयी ।

उस समय वरुणदत्त नामक एक गन्धर्व आकाशपथ से गुज़र रहा था । अप्सराओं के सौंदर्य को भी मात करनेवाला—कनकप्रभा का सौंदर्य देखकर मुग्ध हो वह राजकुमारी के समीप उतर आया ।

अपनी कल्पना के विपरीत अपने समक्ष एक गंधर्व को प्रत्यक्ष देख़ कनकप्रभा विस्मित हो निश्चेष्ट हो गयी । इसे देख सखियाँ दूर चली गयीं ।

वरुणदत्त ने कनकप्रभा से कहा, "मैं आकाशपथ से यात्रा कर रहा था । उस वक्त तुम्हारा सौंदर्य मुझे यहाँ खींच लाया ! मैं वरुणदत्त नाग का गंधर्व हूँ । तुम्हें यदि कोई आपत्ति न हो तो मैं तुम्हारे साथ विवाह करना चाहता हूँ ।"

गंधर्व की बातें सुनकर कनकप्रभा चकित रह गयी । गंधर्व जैसा व्यक्ति अचानक उसके साथ विवाह़ का प्रस्ताव रखते देख वह एक साथ आनन्द और आश्चर्य में आ गयी ।

वह वरुणदत्त को अपनी स्वीकृति कहने ही जा रही थी कि, अचानक उसको अपने मातापिता का स्मरण हो आया ।

उसने वरुणदत्त से कहा, "मैं तो एक कन्या हूँ । कल मैं अपने मातापिता के द्वारा तुम्हें अपनी स्वीकृति सूचित करूँगी ।"

वरुणदत्त ने स्वीकृति सूचक गर्दन हिलायी और वह बोला, "अच्छी बात है, मैं परसों पुनः आ जाऊँगा ।" यह कहकर गंधर्व वहाँ से चला गया ।

(अगले अंक में समाप्त)

धन का मूल्य

विमलानन्द नामक एक साधु तीर्थाटन करते हुए अपने शिष्यों के साथ अनन्तपुर पहुँचा। उस गाँव का सबसे बड़ा धनी आदमी लिंगराज था। साधु तथा उसके शिष्यों के ठहरने का खर्च तथा भोजन का भी व्यय-सब लिंगराज ने ही उठाया। साथ ही साधु के साथ रहकर उसकी काफ़ी सेवा भी की।

कुछ दिन बाद विमलानन्द गाँव छोड़कर जाने को हुआ; तब उसे बिदा करने के लिये जो ग्रामवासी उसके पास पहुँचे, उन्हें वह आशीर्वाद देने लगा और उस समय अपने पार्श्व में खड़े लिंगराज को देखकर कहने लगा, "वत्स, तुम जन्म से धनाढय हो, समस्त प्रकार की सुख-संपदाओं से पूर्ण हो। क्या मैं जान सकता हूँ कि फिर भी किस कामना से प्रेरित होकर मेरी सेवा की?"

इसपर लिंगराज ने विनयपूर्वक कहा, "स्वामिन्, क्या मनुष्य के लिये केवल धन ही प्रधान है? साधु संन्यासियों कि सेवा से बढ़कर कोई ऐश्वर्य भी हो सकता है?"

विमलानन्द यह उत्तर सुनकर संतुष्ट हुआ और लिंगराज को आशीर्वाद देने को हुआ, इतने में मंगराज नाम का ग्रामवासी आगे बढ़कर कहने लगा, "स्वामी, मेरे मन को संदेह कुरेद रहा है। क्या किसी संदर्भ तथा उचित अनुचित का ध्यान रखे बिना यह कहा गया कि मनुष्य के लिये धन प्रधान नहीं है?"

विमलानन्द ने मन्दहास कर के कहा, "किसी सत्य का उद्घाटन करने के लिये किसी प्रकार के नियम व निषेध नहीं है। फिर भी मैं जानना चाहता हूँ कि तुम्हारे मन में यह सन्देह क्यों पैदा हुआ?"

प्रश्न सुनकर मंगराज कहने लगा, "स्वामीजी, मेरा परिवार बहुत ही बड़ा है। दिनभर जी तोड़कर

स्वाती दलाल

मेहनत करने पर भी मैं अपने परिवार का भरण-पोषण ठीक तरह नहीं कर पाता। इस गाँव के अधिकांश लोग मेरी ही स्थिति के हैं। इसलिये यह कहना कि, मनुष्य के लिये धन ही प्रधान नहीं है—लिंगराज जैसे धनी-मानी सज्जनों के लिये ही संभव है। यही है मेरी शंका।"

मंगराज की बातें सुनकर वहाँ पर उपस्थित सब ग्रामवासी अट्टहास कर उठे। लिंगराज ने लज्जित होकर अपना सिर झुका लिया।

इसपर विमलानन्द ने लोगों को समझाया "बेटों, सुनो। मंगराज ने यह बात चाहे मज़ाक से कही हो या सच्चे दिल से— उसके संदेह के भीतर एक धर्म-सूत्र ज़रूर निहित है। वास्तव में यह कहना कि—मनुष्य के लिये धनार्जन उतना अधिक महत्त्व का नहीं है—यह अपार धन कमानेवाले लिंगराज के लिये ही संभव हो सकता है। ऐसे लोगों को चाहिये कि, मुझ जैसे व्यक्तियों के लिये धन खर्च करने की अपेक्षा असहाय एवं गरीबों का उपकार करें। यही ज़्यादा उचित होगा।"

साधु की बातों की स्वीकृति के रूप में सभी ग्रामवासियों ने सिर हिलाये।

साधु ने लिंगराज के कन्धेपर हाथ रखकर कहा,"वत्स, तुम्हारा यह कथन कि, धन ही प्रधान नहीं है, इसे सार्थक बनाना चाहो, तो मैं ने अभी जो कुछ कहा, वैसे करो। मेरी सेवा करके तरने की आकांक्षा रखनेवालों को आज तक मैंने इस धर्म का उपदेश नहीं दिया। मैं समझ रहा था कि मैं ने बहुत सारा ज्ञान अर्जित किया है मगर इतनी सीधीसादी बात मैं नहीं जान पाया। लिंगराज के कारण आज मुझे इस बात का स्मरण हुआ है। मैं लिंगराज को कभी भूल नहीं सकता।" इस के बाद सभी ग्रामवासियों को आशिवार्द देकर विमलानन्द अपने शिष्यों के साथ आगे बढ़ा।

इसके बाद लिंगराज ने अपना धन जनता के उपयोगी कार्यों में लगाया और 'धर्मदाता' नाम से यश प्राप्त किया।

आर्किटक सागर के बर्फीले टीले गल्फ के प्रवाह में प्रवेश करते ही तीन सप्ताह के अन्दर गल जाते हैं।

ताड़वृक्ष करीब २,८०० किस्म के हैं। ये अधिकतर उष्ण प्रदेश में ही दिखाई देते हैं। फिर भी इनमें से दो किस्म के वृक्ष यूरोपीय महाद्वीप से संबंधित हैं।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां जुलाई १९८८ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

S. B. Takalkar

Azmat A. Syed

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ मई १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए । ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा । ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें : चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

मार्च के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : संगीत की अदा!

द्वितीय फोटो : लड्डू पर फिदा!!

प्रेषक : अजित कुमार श्रीवास्तव, कलमबाग रोड, पंजाबी कॉलोनी, मुजफ्फर पुर-८४२ ००१

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३०-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीस, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिये :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

पुरस्कार जीतनेवाले स्पर्धकों को 'चन्दामामा' की बधाइयाँ !

३
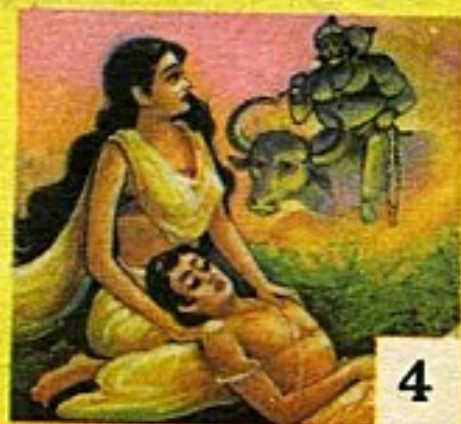
दीपिका बंसल
६४, नमोरी गेट
हिसार (हरियाणा)
१२५ ००१

I Prize

संजय अग्रवाल
श्याम-भवन, बैंक रोड
कुर्सियांग
(६३४२०३

II Prize

दीपा गांधी
२ अ/२३, गीता कॉलनी झील
कुरंझा, दिल्ली
११० ०३१

III Prize

रसना पिलाइए.

प्यार-दुलार और बर्फ़ मिलाइए.

ठंडा-ठंडा रसना भरकर बड़ा-सा गिलास मिल जाए तो भला और क्या चाहिए! मज़ेदार! प्यास बुझानेवाला रसना! रसना के हर पैक से पाइए ढेर सारे गिलास रसना! आपको कितना ख्याल है-बतलाता है रसना! सबके मनभाता है रसना!

ग्यारह मज़ेदार रसना स्वाद:

☐ ऑरेंज ☐ पाइनएप्पल ☐ लाइम ☐ शाही गुलाब
☐ काला-खट्टा ☐ कूल ख़स ☐ केसर इलायची
☐ मसाला सोडा (जलज़ीरा) ☐ टूटी फ्रूटी
☐ ग्रेप ग्लोरी ☐ मैंगो राइप

Mudra:API:4152Hn

भारत • का • सर्वाधिक • बिकनेवाला
सॉफ़्ट • ड्रिंक • कॉन्सेन्ट्रेट